हम और हमारे संस्कार











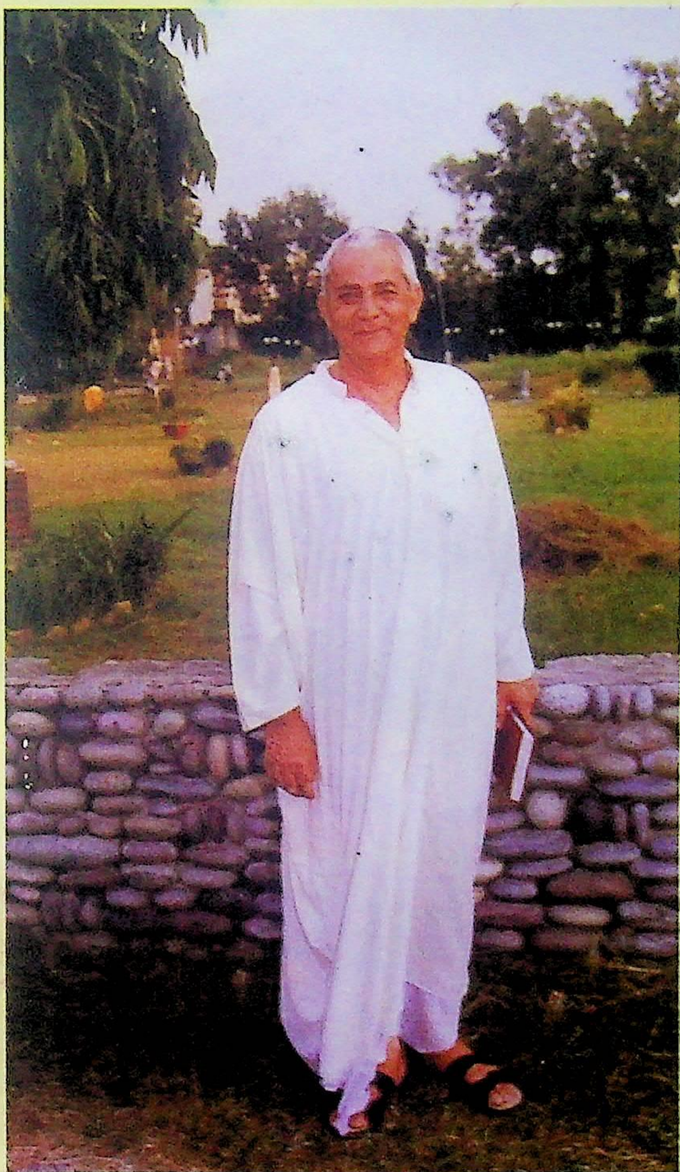

हम और हमारे

संस्कार

लेखक

पं० ओंकारनाथ शास्त्री

पुस्तक का नाम	:	हम और हमारे संस्कार
लेखक	:	पं॰ ओमकार नाथ शास्त्री
प्रकाशन वर्ष (प्रथम संस्करण)	:	सितम्बर 2005 ई॰
प्रकाशक प्रतियों की संख्या	:	1000
कुल पृष्ठ संख्या	:	156
मूल्य	:	125 रूपये
मुद्रक	:	दिल्ली
प्रकाशक	:	पं॰ प्रेमनाथ शास्त्री सांस्कृतिक शोध संस्थान अजीत कॉलोनी गोलगुजराल जम्मू दूरभाष : 2555607
सम्पर्क	:	विजयेश्वर पंचांग कार्यालय, अजीत कॉलोनी, गोल गुजराल, जम्मू
दूरभाष	:	2555607, 9419133233



लेखक :- पं० ओंकार नाथ शास्त्री

अनुक्रमणिका

अन्तर्दृष्टि


प्रोफेसर
(डॉ॰) भूषण लाल कौल

'संस्कार' का शाब्दिक अर्थ है—पवित्री करण (Purification), पापादि का प्रक्षालण करने वाले कृत्य, द्विजातियों (Twice Born, a Brahmin) के शास्त्र विहित कृत्य जो मनु के अनुसार बारह हैं और कश्मीरी पिण्डतों के विश्वासानुसार चौबीस, या सोलह। शुद्ध करने वाला कोई कृत्य अथवा माँझ कर चमका देने वाला कोई कर्म संस्कार कहलायेगा। इस शब्द की अन्तरात्मा में मानव शुद्धि, सुधार, पाप प्रक्षालन, उत्थान एवं आत्म ज्ञान प्राप्ति का अर्थ निहित है। लौकिक भाषा का जब पाणिनि ने संस्कार किया तो संस्कृत कहलाई।

कश्मीरी पण्डितों के **रस्मो रिवाज पर** आधारित श्री सोमनाथ पण्डित की पुस्तक '**काशरयन बटन हुँद्य रस्म तु रिवाज**' कश्मीरी भाषा में कश्मीर विश्वविद्यालय के 'कश्मीरी विभाग' द्वारा सन् 1983 ई॰ में प्रकाशित हुई। श्री सोमनाथ पण्डित ने व्यवस्थित रूप में उपशीर्षकों के अंतर्गत संस्कारों पर सम्यक् प्रकाश डाला है लेकिन दो बातें

ध्यान देने योग्य हैं--(1) यह पुस्तक नस्तालीक लिपि में लिखी गई है। (2) आजकल बाजार में कहीं उपलब्ध नहीं है अतः सामान्य जिज्ञासु पाठक इस पुस्तक को पढ़ने से वंचित रह जाता है। कश्मीर-विश्वविद्यालय के कश्मीरी विभाग ने इसके पुनः प्रकाशन की व्यवस्था नहीं की। देवनागरी लिपि में प्रस्तुत करने की तो बात ही नहीं है।

विस्थापन के बाद इस दिशा में दूसरा प्रयास श्री मोहन लाल आश जी ने किया है। यह पुस्तक '**कश्मीरी पण्डितों के संस्कार**' शीर्षक से हिन्दी भाषा में सन् 2002 ई० में प्रकाशित हुई। उन्होंने भी पर्याप्त सामग्री एकत्र कर लिखने का अच्छा प्रयास किया है लेकिन किताबत करने वाले बन्धु ने उन की आशाओं पर पानी फेर दिया। फलतः आश जी का प्रयास एक प्रकार से असंख्य शंकाओं में उलझ कर रह गया।

रही सही कसर प्रकाशक ने पूरी की है क्योंकि उन के पास शुद्ध कश्मीरी लिपि नहीं थी अतः विकृत लिपि पाठ-शुद्धि के सन्देहास्पद होने का कारण बन गई।

लगता है श्री आश जी को कोई परामर्श देने वाला नहीं मिला है। आवश्यकता इस बात की थी कि शास्त्र मर्मज्ञ कोई वेद पण्डित इस विषय को लेकर सविस्तार अपनी सांस्कृतिक विभूति का परिचय अपने जाति बन्धुओं को दे और यही काम पं० ओमकार नाथ शास्त्री ने बड़ी लग्न एवं तत्परता के साथ किया है। बहुत समय के बाद हिन्दू

लोकाचार (Hindu Ethos) पर आधारित शास्त्र प्रमाण सहित तर्काश्रित ज्ञान वर्द्धक रचना का प्रकाशन हो रहा है। इस से पूर्व ब्राह्मण देव स्वर्गीय प्रेमनाथ शास्त्री ने पहली बार एक क्षेत्र विशेष अर्थात् कश्मीर घाटी की हिन्दू संस्कृति के महत्त्वपूर्ण मुद्दे सप्रमाण व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किये हैं लेकिन यह काम उनके द्वारा पूरा न हो सका। वे जीवन पर्यन्त तलाशते ही रह गये। बुनियादी तथ्यों को खोजकर विश्वसनीय व्यख्या के साथ पेश करने का पुनीत काम आज उन के सुपुत्र ने पूरा किया और इस प्रकार पितृ ऋण के साथ-साथ ऋषि ऋण से भी उऋण हो गये।

एक और विशेष बात की ओर आप महानुभावों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। संस्कार (Mental refinement), रीति या रीत (Custom), परम्परा (Tradition), तथा रूढ़ि (Sterotyped Convention) शब्द समानार्थी नहीं हैं। संस्कार पवित्री करण का, रीति या रीत-रिवाज चलन अथवा परिपाटी का, परम्परा अविछिन्न चलते आये हुए अटूट सिलसिले की अथवा प्रथा का तथा रूढ़ि रूढ़ हो चुकी परम्परा के द्योतक है। संस्कारों पर चर्चा करते समय हमें इन के धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक सन्दर्भो को भी तलाशना होगा।

शास्त्री जी ने संस्कारों पर ही अपना ध्यान केन्द्रित रखा है जो इस अध्ययन की प्रमुख विशेषता है जिस बात ने मुझे बेहद प्रभावित किया है वह है संस्कारों के वैज्ञानिक

पहलू (Sereutific aspect) पर विचार करके निष्कर्ष प्रस्तुत करना जो इस प्रकार के अध्ययन के लिये एक नवीन उपलब्धि कश्मीरी पण्डितों की सांस्कृतिक सम्पदा पर क्रमबद्ध विचार प्रस्तुत करते हुए हम शुभ महोत्सवों पर जो शुभदायक 'वनवुन' गीत गाते हैं। उनमें से वह उदाहरण प्रस्तुत करके शास्त्री जी ने इन्हें वैदिक परम्परा के साथ जोड़ा है और वेद मंत्रों के विशिष्ट गायन और कश्मीरी पण्डितों के वनवुन गीतों के गायन में अद्भुत साम्य स्वीकारा है। ये गीत हमारी वैदिक परम्परा से जुड़े हैं और इनकी संगीत प्रस्तुति के श्रवण मात्र से ही हृदय के तार झंकृत हो उठते हैं।

यज्ञोपवीत, विवाह एवं अंत्येष्टि संस्कार पर शास्त्रीजी ने सविस्तार प्रकाश डाला है जो सराहनीय है। कश्मीरी पण्डितों के विवाह में 'पोशि पूजा' (मुख्य अर्चना) का क्या महत्त्व है, यह क्यों की जाती है और इस पूजा के समय किन वेद मंत्रों का आशीर्वाद रूप में पाठ किया जाता है अथवा विवाह मंडप पर 'दय् बत्' का क्या महत्त्व है, 'सप्त पदी क्या है ? इसके साथ मंत्रों का क्या अभिप्राय है तथा 'द्वार पूजा' क्या है ? इसके साथ मंत्रों का क्या अभिप्राय है तथा 'द्वार पूजा' क्यों ? इसके पीछे क्या उद्देश्य है:- घर के स्वामी के शुभ और मंगल हेतु द्वार पूजा जिस के परिणाम स्वरूप वह सारा शुभ फल और मंगल बारात-घर के स्वामी ही वरदान रूप में पाते हैं—आदि विषयों पर विचार प्रस्तुत करते समय यह स्पष्ट हो जाता है कि शास्त्री जी अपनी

सामाजिक विवशताओं और विकृतियों के प्रति भी उतने ही सचेत थे जितना धार्मिक अनुष्ठानों को पूरा करने के हेतु दत्तचित्त दिखाई देते हैं।

कश्मीरी पण्डितों की संस्कृति का मूल मंत्र है—'जियो और जीने दो' (Live and Let live) देखा जाय हमारी संस्कृति तो विराट आर्य संस्कृति का ही एक विशिष्ट उन्नति और ख्याति प्रद अंग है। हज़ारों वर्षों से एक सारस्वत ब्राह्मण समुदाय (आर्यद्विज) एक विशिष्ट पर्वतीय भू-खण्ड में रहता चला आया है मुख्य धारा से हट कर अलग हो जाने के कारण, विशिष्ट भौगोलिक और प्राकृतिक सीमाओं के भीतर विकसित होने के कारण, महान तपस्वी ऋषि मुनियों और बुद्धि जीवियों के चिन्तन के परिणाम स्वरूप समय समय पर विकास के पथ पर नवीन तत्वों और गुणों का समावेश वस्तुतः विकास की स्वाभाविक क्रिया का परिणाम है। यही कारण है कि कश्मीर मण्डल में विकसित आर्य संस्कृति 'कश्मीरी पण्डित संस्कृति' के नाम से चर्चित रही।

यह कहना बिल्कुल उचित होगा कि हमारी संस्कृति जड़वादी (Materialistic) संस्कृति नहीं है। हम जीना चाहते हैं सब को अपने साथ लेकर उन्मुक्त प्रकृति की गोद में, यही तो शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व (Peaceful Coexistence) कहलायेगा। जिस पर हमें अटूट विश्वास है।

संस्कारों को मनुष्य उस परिवेश से ग्रहण करता है जिसमें उसका शारीरिक और मानसिक विकास होता है।

वस्तुतः संस्कार सांस्कृतिक उन्नति के परिचायक हैं, आत्मबोध की पहचान है।

पुस्तक के अन्तिम भाग में शास्त्री जी ने उस संस्कार पर सविस्तार विचार किया है जिसे मैं 'पूर्णाहुति संस्कार' मानता हूँ। दाह संस्कार, दसवें, ग्यारहवें और बारहवें दिन के संस्कार किसी मृत प्रिय के प्रथम पखवाड़े के अहम् क्रिया कर्म संस्कार हैं। यह क्रम पूरे एक वर्ष तक चलता रहता है।

यदि इस संस्कार को '**लीलान्त संस्कार**' भी कहा जाये तो अनुपयुक्त नहीं होगा।

बेटे को बेटी से अधिक महत्त्व देना वास्तव में पुरुष-प्रभुत्व (Male Chauvinism or male dominance) का परिणाम है। मेरा मानना यह है कि वह पुरुष अथवा दम्पत्ति भाग्यहीन है जिनके घर लक्ष्मी स्वरूप बेटी ने जन्म न लिया हो अर्थात् जो एक बेटी के माँ-बाप न हो। उनका दुर्भाग्य है। पुत्र ही पिता को नरक में जाने से बचा सकता है—**महाझूठ** और **भ्रामक** है।

शास्त्री जी की प्रस्तुत रचना को पढ़कर निस्सन्देह हम अपने अतीत के साथ जुड़ जाते हैं और उसी ज्ञान की शक्ति के आधार पर हम वर्तमान से जूझने की शक्ति जुटा पाते हैं और भविष्य के सुरक्षित रहने का हमें विश्वास हो जाता है।

धर्म, समाज और लोक तीनों का अद्भुत संगम हमें इस रचना में देखने को मिलता है। संस्कारों का सम्बन्ध

धर्मशास्त्र एवं धार्मिक विश्वासों के साथ है। धार्मिक विश्वासों का पालन समाज में होता है और लोक सहर्ष इन उत्सवों में सम्मिलित होकर 'वनवुन' के माध्यम से इसे लोक मानस के साथ जोड़ देता है।

मैं जिज्ञासु पाठकों को बताना चाहता हूँ कि मृत्यु के समय भी लोक गीत प्रस्तुत किये जाते थे जो विशिष्ट स्त्रियाँ प्रस्तुत करती थीं और इन्हें 'वान' कहते थे। पंजाब के ग्रामीण भागों में आज भी किसी के देहान्त पर 'वान' शोक गीत प्रस्तुत किये जाते हैं।

अतः धर्म, समाज और लोक—इस त्रिवेणी का अविरल प्रवाह हमारे संस्कारों को सिक्त करते हुए जन मानस के साथ जोड़ देते है। किसी संस्कार को सम्पन्न करते समय उसकी सम्यक जानकारी देना घर के बुजुर्गों का पुनीत कर्तव्य है क्योंकि बिना जाने माने केवल रूढ़ि पालन करना धर्म नहीं, अधर्म है, पुण्य नहीं पापाचार है।

पं० ओकार नाथ शास्त्री को बधाई देते हुए और इस विश्वास के साथ कि वे इस पुनीत कर्तव्य कर्म को जारी रखेंगे क्योंकि अभी केवल शुरूआत हुई है। कई विषय ऐसे हैं जिन पर विस्तार के साथ पुनः परीक्षण करते हुए लिखने की आवश्यकता है। इन में हमारे प्राचीन तीर्थ स्थान एवं मन्दिर त्यौहार, उत्सव, वस्त्राभूषण, ज्योतिषविद्या महान विभूतियाँ एवं हिन्दू इतिहास के अविस्मरणीय पृष्ठ आदि विषयों को लेकर उपयोगी काम किया जा सकता है। मुझे

विश्वास है कि विद्वान बन्धु प्रस्तुत रचना को इसके धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं लोक मान्यताओं के सन्दर्भ में परखकर अपने अमूल्य सुझावों से लेखक का मार्ग दर्शन करेंगे।

मेरा विश्वास है कि स्वस्थ आलोचना साहित्य साधना के हेतु संजीवनी सिद्ध होती है।

इसी विश्वास के साथ

प्रो (डा॰) भूषण लाल कौल
एम.ए.पी. एच डी., डी. लिट्.
भूतपूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग
कश्मीर विश्वविद्यालय
श्री नगर, कश्मीर
(वर्तमान काल में विस्थापित)

आवास
गाँव बरनाई-धरमाल
पोस्ट ऑफिस-मुटठी
जम्मू-181205 (जम्मू कश्मीर राज्य)
दूरभाषः 2593215

दो शब्द

विस्थापन के बाद कश्मीरी पण्डितों में संस्कारों के विषय में जानकारी प्राप्त करने की इच्छा लगातार बढ़ती रही इनकी सार्थकता एवं उपयोगिता के विषय में कई शंकायें व्यक्त होने लगी। समाज एक बार फिर संकट ग्रस्त अवस्था में अपनी परम्परा के साथ जुड़ने के हेतु आकुल-व्याकुल दिखाई दे रहा है। वस्तुतः जन्म भूमि से बिछुड़ कर जन मानस को यह खौफ़ सताने लगा कि कहीं हम अपने परम्परागत आधारभूत विश्वासों एवं स्वस्थ परम्पराओं से भी बिछुड़ न जाये।

मेरे सम्मान्नीय पिता श्री स्वर्गीय पं० प्रेम नाथ शास्त्री ने अपने जीवनकाल में आने वाले भविष्य के पूर्वाभ्यास से प्रेरित होकर कश्मीरी पण्डितों के संस्कारों के विषय में लिखित रूप में यत्र तत्र संकेत देते हुए लाभदायक जानकारियाँ प्रकाशित की हैं। वे ही मूलतः मेरे प्रमुख प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं।

विस्थापन के बाद इस विषय को लेकर कुछ प्रकाशित सामग्री जनता के पास अवश्य पहुँची लेकिन सम्भवतः वे संतुष्ट न हुये अतः जम्मू और जम्मू के बाहर मेरे श्रद्धेय बन्धु बार-बार इस विषय पर अधिकार के साथ लिखने के हेतु मुझ से निवेदन करते रहे। जनता की इच्छा और समय की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए मैंने दो वर्ष पूर्व इस विषय पर लेखन कार्य आरम्भ किया। इससे पूर्व पर्याप्त

उपयोगी सामग्री एकत्र की। शास्त्रों से सन्दर्भ सूत्र इकट्ठे किये। प्रत्येक प्रमुख संस्कार से सम्बन्धित 'वनवुन' गीतों का चयन किया और तत्पश्चात् क्रमबद्ध रूप से प्रत्येक संस्कार के मूल अभिप्राय, धार्मिक, सामाजिक एवं वैज्ञानिक उपयोगिता पर विचार करते हुए तथा शास्त्रादेश अनुसार संस्कार के महात्म्य पर प्रकाश डालते हुए जन मानस को सचेत करने का प्रयास किया है। इन संस्कारों पर और भी विस्तार के साथ विचार किया जाता परन्तु तब यह एक ज्ञानवर्धक शोध रचना बन जाती और मानस के साथ इसका सम्पर्क टूट जाता 'Small is beautiful' (लघु में ही सौन्दर्य निहित है।) के आधार पर मैंने कश्मीरी पण्डित के जीवन से जुड़े तमाम संस्कारों की चर्चा करके अपने सांस्कृतिक उत्तरदायित्व के प्रति उऋण होने का प्रयास किया है। मैंने ऋषि ऋण को कहाँ तक चुकाया है इसका निर्णय मैं विज्ञ पाठकों पर ही छोड़ देता हूँ।

प्रोफेसर डा० भूषण कौल के प्रति आशीर्वाद स्वरूप दो शब्द लिखना मेरी नैतिक जिम्मेदारी है। वे बारम्बार इस पुस्तक के लेखन हेतु मुझे प्रेरित करते रहे। पाण्डुलिपि पढ़ कर उन्होंने कुछ सुझाव भी दिये और एक सार गर्भित भूमिका भी लिखी। उनके प्रति आभार व्यक्त करते हुए मैं उन्हें सुखद जीवन का आशीर्वाद देता हूँ।

स्व० पं० प्रेमनाथ शास्त्री की 85वीं जयन्ती पर
21-9-2005 ई०

पं० ओमकार नाथ शास्त्री
अजीत कॉलोनी
गोल-गुजराल, जम्मू
दूरभाष : 2555 607, 9419133233

हमारे संस्कार

हमारी संस्कृति का मूलाधार वेद है, वेद किस को कहते हैं? वेद कहते हैं ज्ञान को, वेद के चार काण्ड हैं ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान या ऋक्, यजुः साम और अथर्व, ऋक् को धर्म, यजुः, को मोक्ष, साम को काम तथा अथर्व को अर्थ भी कहा जाता है अर्थात् धर्मार्थ काम मोक्ष। वेदों में यर्जुवेद में कर्म काण्ड सम्बन्धित ऋचायें हैं जो प्राणिमात्र को हितकारी कर्म करने के हेतु प्रेरित करती है, मनुष्य माता के गर्भ से एक मांस का पिंड होता है जन्म के पश्चात् एक मनुष्य के लिये ऋषियों ने कुछ संस्कार रखे हैं परन्तु उनके विषय में भी मतमतान्तर हैं मनु ने 13 संस्कार कहे हैं, गौतम ने 40 संस्कार कहे हैं, लौगाक्ष ने 24 संस्कार कहे हैं आश्वलायन गृह्य सूत्र में 11 संस्कारों का वर्णन है, पारस्कर गृह्यसूत्र में 12 संस्कारों का वर्णन है व्यास ने 16 संस्कार माने हैं पूरे भारत में 16 संस्कार ही मान्य हैं परन्तु काश्मीरी पण्डितों ने लौगाक्ष के 24 संस्कारों को स्वीकारा है। शास्त्रकारों ने बच्चे को

अलग-अलग समय पर अलग-अलग संस्कार करने के लिए कहा है परमात्मा ने मनुष्य को बुद्धि रूपी उपहार देकर जो अनुग्रह किया है वह पशुओं पर नहीं है, पशु-पक्षियों को प्रकृति स्वयं ही नियम पर चलाती है मनुष्य को मर्यादा में रखने का एक मात्र साधन है संस्कारों को अपनाना तथा उनके मूल तत्त्व को समझना तथा अपने आप को धार्मिक ढांचे में डालना, लिखा भी है:-

"आहार निद्रा भय मैथुनं च,
सामान्यम् एतत् पशुभि, नराणां
धर्मो हि तेषाम्-अधिको विशेषः
धर्मेण हीनः पशुभिः समानः"।

अर्थात्:- मनुष्यों तथा पशुओं में आहार, निद्रा, भय, काम इत्यादि एक जैसा है परन्तु, मनुष्यों में इस के अतिरिक्त धर्म है जो इस की एक विशेषता है। धर्म हीन पशु के समान है, ***गान्धी जी कहते*** थे:- धर्म के बिना जीना बे-असूली का जीना है।

संस्कार करने का उद्देश्य मानव-समाज को उच्च से उच्चतर तथा उच्चतर से उच्चतम बनाना है।

संस्कार किसे कहते हैं ? संस्कार का अर्थ है शुद्ध

करना, चमकाना, किसी प्राकृतिक वस्तु को प्रयोग में लाने के योग्य बनाना, किसी वस्तु के रूप को बदल देना, उसे नया रूप देना। ईश्वर द्वारा बनायी हुई हर वस्तु को प्राकृत वस्तु कहते हैं वही वस्तु कांट-छांट कर उपयोगी बनाने को संस्कार की हुई वस्तु कहलाती है। उदाहरण के रूप में हम बच्चे को लिखने के लिए पेंसिल देते हैं उस पेंसिल को पहले खुरेदते हैं कि जिस से बच्चा लिख सके पेंसिल के खुरेदने को **संस्कार** कहते हैं या कपास को लीजिये, कपास प्राकृत वस्तु है उस कपास को अनेक क्रियाओं से कपड़े का रूप देकर 'कमीज़' का बनाना संस्कार किया हुआ रूप है। इसी प्रकार जब मनुष्य जन्म लेता है वह उसका प्राकृत रूप होता है उसके पश्चात् जो कुछ वह बनता है संस्कारों से ही बनता है। इसी प्रकार बालक के उत्पन्न होते ही उसे संस्कारों की भट्ठी में डालकर उसके दुर्गुणों को निकाल कर उसमें सद्‌गुण डालने का प्रयत्न वैदिक रीति के अनुसार किया जाता है चरक ऋषि ने कहा है:-

"संस्कारो हि गुणान्तराधानमुच्यते"

अर्थात्:- संस्कार पहले से विद्यमान दुर्गुणों को हटा कर उनकी जगह सद्‌गुणों का आधान करने को

'संस्कार' कहते है। संस्कार मनुष्य के जीवन निर्माण की योजना है। बच्चा जब जन्म लेता है वह अपने साथ दो प्रकार के संस्कार अपने साथ लेकर आता है एक वह जो वह जन्म जन्मान्तरों से अपने साथ लेकर आता है, एक वह जो वह अपने माता-पिता के संस्कारों के रूप में वंश-परम्परा से प्राप्त करता है। संस्कारों द्वारा बच्चे को ऐसे माहौल में डाला जाये जिस में अच्छे संस्कारों को पनपने का अवसर मिले तथा बुरे संस्कार समाप्त हो जायें।

'**संस्कार**' किसी भी धर्म या सम्प्रदाय के महत्वपूर्ण अंग हैं, हिन्दू संस्कारों का वर्णन वेदों, धर्म ग्रन्थों, स्मृतियों इत्यादि में आता है, संस्कार प्रायः धार्मिक विश्वासों तथा सामाजिक परिस्थितियों पर आधारित होते हैं, किसी भी संस्कृति को पूर्ण रूप से समझने के लिये संस्कारों का अध्ययन या ज्ञान होना बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

मानसिक शुद्धि तथा शारीरिक व स्थूल शरीर की शुद्धि के लिये जो क्रियायें अच्छी प्रकार की जायें, ऋषि लोगों ने उनको ही '**संस्कार**' का नाम दिया है।

ऋषियों के पास साधारण मनुष्य को उत्तम तथा उन्नत मनुष्य बनाने का जो साधन था उसको '**संस्कार**'

कहते हैं।

संस्कृत व्याकरण के अनुसार '**संस्कार**' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की सम् पूर्वक 'कृञ' धातु से घञ्' प्रत्यय करके की गई है 'सम्+कृ+घञ= **संस्कार**।। 'संस्कृति' शब्द का उदगम 'संस्कृत' शब्द से है 'संस्कार' का अर्थ वह क्रिया है जिस से किसी वस्तु का मल (दोष) दूर होकर शुद्ध बने।

शास्त्रों में लिखा हैः-

'जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्यते'

अर्थात्ः- 'द्विज' का अर्थ है दोबारा जन्म लेना, रूपान्तरित होना। संस्कृति का अर्थ है वह शिक्षा-दीक्षा, जिस से मनुष्य का जीवन सुधरे। पुरातन अभ्यासों और आदतों को भी संस्कार कहते है, किसी देश या जाति का संस्कृति का अर्थ है उस देश या जाति की वे पुरानी आदतें प्रथायें, रहन सहन आदि जो उस देश या जाति के मनुष्यों का चरित्र-निर्माण करती है सभी संस्कृतियों का लक्ष्य होता है मानव आत्मा को उन्नत करना।

किसी देश या राष्ट्र का प्राण उस की संस्कृति ही है।

हमारा समाज धर्म पर अवलम्बित है, जीवन के

छोटे-बड़े कार्य धर्म के आधार पर व्यवस्थित है "**धारयतीति धर्मः**" जो समाज को, व्यक्ति को धारण करे "**धर्म**" कहलाता है।

शास्त्रों में लिखा है "**धारणात् धर्ममित्याहुर्धर्मो धारयति प्रजा**"।

जिस प्रकार अग्नि का धर्म "उष्णवत्व" है उष्णत्व न होने पर अग्नि नहीं रहती, इसी प्रकार धर्म न होने पर हमारे समाज की सत्ता ही नहीं रहेगी धर्म पर ही "**संस्कृति**" अवलम्बित है। धर्म की उपेक्षा से ही वर्तमान मनुष्य-समाज का पतन होता है, कहा भी है:-

"**धर्म एव हतो हन्ति-धर्मो रक्षति रक्षितः**"

अर्थात् जो धर्म का नाश करता है धर्म उस का नाश करता है जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उस की रक्षा करता है।

"**स्वधर्मे निधनं श्रेय, पर धर्मो भयावहः**"

अर्थात् यदि अपने धर्म में कोई दोष भी दिख पड़े, अपने लिये वही ठीक है परन्तु दूसरे का धर्म भय देने वाला है। अतः अपने धर्म के हेतु मर जाना श्रेयस्कर है।

'**संस्कार और संस्कृति**' एक ही धातु से

निकले है संस्कारों से मनुष्य की चेष्ठा, व्यवहार तथा कर्म आदि होते हैं, संस्कृति से ही किसी कौम का उत्थान या पतन होता है, किसी संस्कृति का परिचय उस के इतिहास और साहित्य से चलता है हमारी संस्कृति की आधारशिला वेदादि शास्त्र तथा श्रुति स्मृत्यादि हैं।

काश्मीरी पण्डितों के 24 संस्कारः-

(1) गर्भाधान (2) सीमन्तोनयन (3) पुंसवन (4) जात कर्म (5) नाम कर्म (6) निष्क्रमण-संस्कार (7) अन्न प्राशन (8) चूडा करण (9) कर्णवेध संस्कार (10) यज्ञोपवीत (11) त्रैविद्यक (12) उपाकर्म (13) चातुर्होतृकम्-अपवर्गे चातु र्होतृकम् (14) प्रवर्ग्य व्रत अपवर्गे प्रवर्ग्य व्रत (15) अरुण व्रत (16) अपवर्गे अरुणव्रत (17) औपनिषद व्रत (18) श्री काम (19) यशस्काम (20) अपवर्गे औपनिषद्ध व्रत (21) गोदान (22) अपवर्गे त्रैविद्यकम (23) विवाह संस्कार (24) अन्त्येष्टि।

अपनी संस्कृति तथा सभ्यता की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य हैं।

गर्भाधान

विवाह संस्कार के समय दोनों पति पत्नी के सामने यह आदर्श रखा जाता है कि तुम दोनों का सम्बन्ध विषय भोग की तृप्ति के लिये नहीं है, आपके विवाह का लक्ष्य पितृऋण चुकाने के लिये, सुशील सन्तति का जन्म देना। कहा भी है '**गृभ्णमि ते सुप्रजास्त्वाय**' इस महत्त्वपूर्ण संस्कार के लिये शुभ मुहूर्त के बारे में मनु का कहना है कि स्त्री की ऋतुकाल की समाप्ति पर शरीर की शुद्धता होने पर पुत्र की इच्छा वाला '**जुफत**' रात्रि में, पुत्री की इच्छा वाला '**ताक**' रात्रि में गर्भाधान का मुहूर्त निश्चित करे, यह मुहूर्त ऋतुकाल आरम्भ के दिन से 16वीं रात्रि तक किया जाता है।

मुहूर्त चिन्तामणि आदि मुहूर्त शास्त्रों में दर्ज है जो गृहस्थी पुत्र की इच्छा रखता हो तो वह गर्भाधान मुहूर्त, पुरुष वार, पुरुष नक्षत्र, पुरुष लग्न में होना चाहिए, लग्न कुण्डली में ग्रहों की स्थिति केन्द्र तथा त्रिकोण में शुभ होनी चाहिये, पति पत्नी को दिन भर व्रत धारी रह कर सूर्यास्त से पूर्व एक बार स्वात्विक भोजन करना चाहिये इस संस्कार में जिन वेद मन्त्रों से आहुति डाली जाती है उन मन्त्रों का अर्थ संक्षिप्त में

यही हैः- भूलोक, अन्तरिक्ष तथा सूर्यलोक के देवताओ तथा हे प्रजापति ! इस पत्नी को वीर, चरित्रवान पुत्र उत्पन्न करने की शक्ति दीजिये, हे देवताओ ! यह नारी वीर ऐश्वर्य युक्त दीर्घायु तथा निरोग पुत्र को जन्म देने में समर्थ हो।

युग्मासु पुत्रा जायन्ते स्त्रियोऽयुग्मासु रात्रिषु (मनु):

संस्कार का मुख्य आधार है नवमानव का निर्माण करना, मानव का निर्माण होता है माता-पिता के रज-वीर्य से। प्राणी जो कुछ है वह '**वंशानुसंक्रमण**' Heredity का ही परिणाम है। '**वंशानुसंक्रमण**' को पर्यावरण 'Environment' से बदला जा सकता है। संस्कार इन दोनों भागों का समन्वय है इसी कारण संस्कारों को दो भागों में बांटा गया है पहला वह जो संस्कार माता के पेट में किये जाते हैं उनको गर्भस्थ (Pre-natal) कहा जाता है दूसरे वह जो सन्तान के जन्म लेने के पश्चात् किये जाते हैं जिनको जन्मस्थ-संस्कार (Post natal) कहा जाता है जैसे जातकर्म, नामकर्म इत्यादि। गर्भाधान के लिये शास्त्रों ने पुरुष के लिये 25 वर्ष स्त्री के लिये 16 वर्ष की आयु का विधान है। शास्त्रों में लिखा है।:-

पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान नारी तु षोडशे।
समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात् कुशलोभिषक्।।

गर्भाधान एक धार्मिक संस्कार है, गर्भाधान के समय मन में जो विचार प्रबल होंगे, सन्तान में उन विचारों का यह भौतिक रूप ऐसे ही उतर आयेगा जैसे दर्पण में हमारी शक्ल उतरती है तथा जब बच्चा माँ के पेट में होता है तो उस समय की माँ की मनोवृति का सन्तान पर गहरा प्रभाव पड़ता है इसी प्रकार जब अभिमन्यु अपनी माता सुभद्रा के पेट में था तब अर्जुन ने उसे चक्रव्यूह में जाने की कथा कही थी इसी के प्रभाव से अभिमन्यु चक्रव्यूह को तोड़ता हुआ अन्दर घुस गया था। कहते हैं कि अर्जुन ने सुभद्रा को कथा सुनाते समय चक्रव्यूह में से वापिस आने का किस्सा नहीं सुनाया था इसी कारण वह चक्रव्यूह से बाहर निकल नहीं आ सका। इसी प्रकार सुनने में आता है कि अष्टावक्र ने माता के गर्भ में ही वेदान्त सीख लिया था क्योंकि उसकी माता मदालसा गर्भावस्था में गाती थी।

"शुद्धोसि, बुद्धोसि, निरंजनोऽसि
संसार माया परिवर्जितोऽसि"

अर्थात्:- हे मेरे बेटे ! तू शुद्ध है, संसार की माया से निर्लिप्त है। इन्हीं कारणों से उसके आठों सन्तान ब्रह्मर्षि बन गए।

गर्भाधान एक धार्मिक संस्कार है क्योंकि यह नये

आत्मा की पहली सीढ़ी है हमें पहले उसके बीज की ओर ध्यान देना होगा जहाँ से नये आत्मा का उगना आरम्भ होता है जैसे अच्छे वृक्ष के लिये अच्छे बीज, खाद वातावरण इत्यादि की आवश्यकता होती है उसी प्रकार बलिष्ठ शरीर तथा उच्च आत्मा के लिये उसकी ओर ध्यान देना आवश्यक है जिसके शुद्ध तथा पवित्र होने पर उच्च आत्माओं का आगमन इस संसार में होगा यह एक धार्मिक तथा पवित्र संस्कार है इस कार्य में पति-पत्नी यज्ञ करते थे यदि आप बीस वर्ष पहले के **विजयेश्वर पंचांग** को देखेंगे वहां पर **"पृथक शयन मुहूर्त"** भी दर्ज होता था, यह कार्य पूरी धार्मिक रीति-रिवाज से तथा निश्चित मुहूर्त पर होता था क्योंकि इस का परिणाम पति-पत्नी के लिये ही नहीं अपितु पूरे समाज के लिये होता है गर्भाधान के समय शरीर तथा मन की अवस्था का सन्तान पर गहरा प्रभाव पड़ता है, चरक संहिता में यह लिखा हैः-

अंगादङ्गात्संभवसि हृदयादधिजायसे।
आत्मा वै पुत्र नामासि स जीव शरदः शतम्।।

अर्थात्ः- सन्तान माता-पिता के अंग-अंग का निचोड़ होती है एक तरह से उनकी ही आत्मा होती है इसलिये सन्तानोपत्ति के समय उत्कृष्टतम रूप होना

चाहिये तथा स्त्री को चाहिये कि वह उस विचार में डूब जाये तन्मय हो जाये जिस प्रकार की सन्तान वह चाहती है कहा भी है:-

"तन्मना बर्जीं गृह्णीयात्"

काम को हमारे यहां बड़ी पवित्र भावना के रूप में स्वीकारा है गीता में कहा है:-

'धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि'

शुभ मुहूर्त में शुभ मंत्र से प्रार्थना करके गर्भाधान करें। इससे कामुकता का अन्त तथा मन शुभ भावना से युक्त हो जाता है।

1. घर पर बच्चों के साथ अपनी मातृ भाषा (कश्मीरी भाषा) में बात करें।

2. अपने बच्चों को बचपन में ही संस्कारों की शिक्षा दें।

3. लडकियों में बाल काटने की आदत न डालें।

सीमन्तोनयन
(नारीवन स्वारज)

यह दूसरा संस्कार भी गर्भ में ही किया जाता है यह संस्कार गर्भस्थित बच्चे के मानसिक-विकास (Mental Development) के लिये किया जाता है। सीमोन्तोनयन का अर्थ है

सीमन्त उन्नीयते यस्मिन कर्मणि।
तत् सीमन्तोन्नयनमिति कर्म नामधेयम्।।

अर्थात्:- इस कृत्य में गर्भिणी स्त्री के केशों को ऊपर उठाया जाता है। केशों को दो गुत्थों में विभक्त किया जाता है तथा यह कृत्य उस का पति ही कर सकता है।

गृह्यसूत्रों, स्मृतियों तथा ज्योतिष ग्रन्थों में इस संस्कार के लिये अलग-अलग समय कहा है गृह्यसूत्र में **"प्रथम गर्भायाः चतुर्थे मासि सीमन्तोन्नयनम्"** चौथे महीने में मस्तिष्क के कोश (cells) बनने आरम्भ होते हैं। स्मृति के अनुसार **"षष्ठेऽष्टमे वा सीमान्तः"**

बुद्धि का बीज छठे मास में पड़ने लगता है आठवें मास में पहुँचते-पहुँचते शरीर, मन, बुद्धि, हृदय तैयार हो जाते हैं इस समय उसके दो हृदय काम करने लगते है इस समय स्त्री को **"दौहृद"** कहा जाता है यह अवस्था स्त्री के लिये खतरनाक होती है, आठवें मास में स्त्री को सन्तान के शरीर, मन, बुद्धि, हृदय को स्वस्थ रखने के लिये विशेष ध्यान देना चाहिए।

ज्योतिष ग्रन्थों के अनुसार यह संस्कार बच्चे के जन्म तक कभी भी हो सकता है।

पंच संधयः शिरसि विभक्ताः सीमन्ताः।
तत्राघात वा उन्माद भय चेष्ठा नाशैः मरणम्।

(सुश्रुत अध्याय 6)

अर्थात्:- सिर पांच संधियों में बटा हुआ है—उनमें चोट लगने से, उन्माद होने से, चेष्ठा न करने से मनुष्य मर जाता है सिर की खोपड़ी की संधियों के कारण उसे सीमन्त कहते हैं सीमन्तोनयन का अर्थ है मस्तिष्क का विकास (Mental Development) इस समय पति पत्नी का ध्यान बच्चे के मानसिक विकास की ओर केन्द्रित होना चाहिये इस संस्कार के करने के विषय में मत भेद होने पर भी चौथे मास में ही करने का विशेष प्रचलन है, **"चतुर्थे मासे सीमन्तोन्नयनम्"**

क्योंकि चौथे मास में मन या मस्तिष्क (Nervous System) का निर्माण होने लगता है। इसी कारण से सीमन्तोन्नयन का समय चौथा महीना रखा गया है माता के मानसिक विचारों का सन्तान पर प्रभाव पड़ता है मनु महाराज ने मनुस्मृति में लिखा है।

यादृशं भजते नारी सुतं सूते तथा विधम्।
तस्मात् प्रजा विशुद्ध्यर्थं स्त्रियं रक्षेत् प्रयत्नतः।।

अर्थात्:- गर्भवती स्त्री जिस प्रकार की तस्वीर अपने मन में खींच लेती है वह उसी प्रकार की सन्तान को जन्म देती है इसलिये उत्तम सन्तान के लिये स्त्री को ऐसे वातावरण में रखना चाहिये जिस से उत्तम तथा शुद्ध संस्कारों से युक्त सन्तान हो।

सीमन्तोन्नयन संस्कार की विधिः

इस संस्कार में माता को तपस्विनी व्रत में रहने, सात्विक आहार खाने, हर समय मन में शुद्ध विचार रखने, प्रातः काल उठने, नित्य स्नान करने, नित्य शुद्ध वस्त्रों के धारण करने, किसी शुभ मुहूर्त पर पती अपने हाथों से पत्नी के केशों को ऊपर की ओर (सिर के अग्र भाग से आरम्भ कर) संवारता है उस समय कई मन्त्रों का उच्चारण होता है तथा पति पत्नी के बालों को दो हिस्सों में बांट कर दो गुत्थ बनाता है यह दोनों

गुत्थ (लठरू) मौली से बांध जाते हैं गृह्य सूत्र में लिखा है:-

"वीर भूः जीवसूः जीव पत्नी
इति ब्राह्मण्यो मंगल्याभि वीग्भिर् उपासीरन्"

अर्थात्:- मंगलगान करने वाली महिलायें गर्भिण स्त्री को आशीर्वाद देती हैं और कहती है "तू वीर सन्तान उत्पन्न करने वाली बन तुम दीर्घायु, सुशील सन्तान उत्पन्न करने वाली बन, तुम चिरकाल तक सौभाग्यवती बनी रहो।"

समय के परिवर्तन होने के साथ हम यह संस्कार आजकल यज्ञोपवीत पर करते हैं जिस को '**नारीवन खारुन**' कहते हैं ?

1. लड़की तथा लड़के को विवाह संस्कार से पहले ससुराल भेजना धर्मशास्त्र के विरुद्ध हैं।

2. हमें अन्तर्जातीय विवाह (INTER CASTE MARRIAGE) ***का विरोध खुल कर करना चाहिए।***

3. खड़े होकर भोजन करना हमारी सभ्यता नहीं हैं।

पुंसवन
(दुध दयुन)

पुंसवन संस्कार तीसरा संस्कार है इसका समय गर्भ स्थिर हो जाने का ज्ञान हो जाने के समय के दूसरे या तीसरे महीने में किया जाता है। गर्भस्थित बच्चे का निर्माण दो दिशाओं में होता हैः- (1) शारीरिक विकास (Physical Development) (2) मानसिक विकास (Mental Development): शारीरिक विकास (Physical Development) के लिए पुंसवन संस्कार किया जाता है। पुंसवन संस्कार का मुख्य लक्ष्य है माता का ध्यान उस के गर्भ में पल रही सन्तान के शारीरिक-विकास की ओर खींचना है क्योंकि गर्भ स्थित होने के बाद गर्भस्थ सन्तान के दो प्रकार के खतरे होते हैं। (1) माता की असावधानी से स्थित हुआ गर्भ ही गिर जाय। (2) गर्भ बनने पर भी बच्चे का शरीर ठीक तरह से विकसित न होना। इसलिये माता का कर्तव्य है कि सन्तान के शारीरिक-विकास

को ध्यान में रखते हुये अपने खाने-पीने, रहन-सहन को इस प्रकार संभाले जिस से सन्तान पर किसी प्रकार का कुप्रभाव न पड़े। क्योंकि माता का प्रभाव सन्तान के निर्माण पर बहुत पड़ता है लिखा भी हैः-

दोषाभिधातैः गर्भिण्या यो यो भागः प्रपीड्यते।
सः सः भागः शिशोस्तस्य गर्भस्थस्य प्रपीडयते।।

अर्थात्ः- किसी भी शारीरिक दोष के कारण गर्भवती स्त्री का जो-जो अंग पीड़ित होता है गर्भ में स्थित शिशु का वही-वही अंग पीड़ित रहता है। पुंसवन-संस्कार का मुख्य उद्देश्य है गर्भ स्थित हो जाने पर गर्भ को स्थिर रखने के लिये भरपूर प्रयत्न करना। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते समय दोनों पति पत्नी एक दूसरे के साथ प्रतिज्ञा करते हैं कि हम दोनों सन्तान के प्रति भी अपनी जिम्मेदारी निभायेंगे।

पुंसवन-संस्कार पर माता को वेद मन्त्रों से बार-बार आशीर्वाद दिया जाता है जैसे- 'देवी ! तू अग्नि जैसे प्रकाशमान, इन्द्र जैसे बलवान पुत्र को जन्म देने वाली हो' ऐसे ही मन्त्रों से अग्नि को देवताओं का माध्यम मान अग्नि में आहुतियाँ डालते हुये पढ़ते हैं।

पुमान् अग्निर् अजायत, पुमासं जनयेत् पुत्रम् दशमे मासि सूतवे येन जातेन विभुना जीवेम शरदः पश्येम शरदः शतम्।

इससे माता के मन में वेदमन्त्रों के द्वारा यह संस्कार डाला जाता है कि हे देवी ! आपने निश्चय से अग्नि जैसे ओजस्वी प्रकाशमान्, इन्द्र जैसे बलवान् पुत्र को जन्म देना है यह संस्कार शास्त्रोक्त विधि से पूरा करके पति-पत्नी दिन भर इस संस्कार को धार्मिक रीति से करते हैं। आजकल भी व्रतधारी रहकर यज्ञ प्रसाद सपरिवार खायें। यह संस्कार माता का ध्यान सन्तान के शारीरिक-विकास पर केन्द्रित करने के लिये है जब तक सन्तान माता के पेट में बढ़ रहा होता है तब तक उसके शारीरिक विकास के लिये माता को ही माध्यम बनाया जा सकता है सन्तान के शारीरिक विकास के लिये Physical Development पुंसवन संस्कार किया जाता है।

1. द्वार पूजा तथा लग्न संस्कार अपने घर पर ही करें।

2. अपने बच्चों का यज्ञोपवीत संस्कार 16 वर्ष तक अवश्य करें।

जातकर्म संस्कार

(काहनेथर)

बालक के उत्पन्न हो जाने के पश्चात् जो पहला कर्म किया जाता है जातकर्म कहलाता है बालक के जन्म होते ही बालक को स्नान, नाभिछेदन, दूध पिलाना इत्यादि क्रियायें की जाती है जन्म के समय ही वेद मन्त्रों से शरीर का स्पर्श आदि करने की भी विधि कहीं-कहीं प्रचलित है परन्तु काश्मीरी पण्डित 11वें दिन तक अशोच मानते हैं इस कारण ग्यारहवें अथवा बारहवें दिन बिना मुहूर्त भी जातकर्म संस्कार करते हैं। धर्मशास्त्र के अनुसार जातकर्म संस्कार बच्चे के जन्म लेने के पश्चात् ग्यारहवें दिन ही करना चाहिये नहीं तो उसके जन्म का अशोच तब तक रहता है जब तक उस का 'जातकर्म' संस्कार नहीं किया जाता है इसी कारण इस को काश्मीरी भाषा में (काहनेथर) कहते हैं अर्थात् जो बच्चे के जन्म के पश्चात् ग्यारहवें दिन संस्कार किया जाता है उस को '**काहनेथर**' कहते हैं।

पहले पांच वर्ष बच्चा मां-बाप के पर्यावरण में रहता है यदि माता-पिता संयम से, साफ-सुथरा जीवन व्यतीत करेंगे तो बच्चा भी वही कुछ ग्रहण करेगा, यदि मां-बाप नाच-तमाशों में, राग रंग में मस्त रहेंगे तो बच्चा भी उसी जीवन में रंग जायेगा।

जातकर्म संस्कार पर बालक को पिता घी, शहद तथा सुवर्ण का अवलेह बनाकर चाटने को देता है, वेदों में तथा भारतीय संस्कृति में घी, शहद तथा सवर्ण के बहुत गुण गाये गये हैं ये पदार्थ दीर्घ जीवन के लिये बड़े सहायक हैं। वेद में जहां 'घी' शब्द का प्रयोग है वहां घी, दूध, दही आदि सब पदार्थों का ग्रहण समझना चाहिये बच्चे को घी चटाने का अर्थ है कि दीर्घ जीवन के लिये घी, दूध, दही, लस्सी सब का सेवन करना।

शहदः- जातकर्म पर बच्चे को जैसे घी चटाया जाता है वैसे ही शहद भी चटाया जाता है, चिकित्सा शास्त्र में शहद का बड़ा महत्त्व है, शहद सुपाच्य तथा स्वास्थ्य प्रद है जिन लोगों ने शहद का विश्लेषण किया है उनका कहना है शहद 'ग्लुकोज' (Glucose) है, शहद त्रिदोष (वात-पित्त कफ) को दूर करता है। घी और शहद चाट कर बच्चे की आँतें साफ हो जाती हैं।

सुवर्णः- जातकर्म संस्कार पर घी और शहद

को सोने की शलाका से बालक को चटाया जाता है सुश्रुत में लिखा है:-

"अथ कुमारं शीताभिः अद्भिः
आश्वास्य जातकर्मणि कृते मधु
सर्पिः अनन्त चूर्णम्
अंगुल्या अनामिकया लेहयेत्"।

अर्थात्:- अनामिका अंगुली से मधु, घी तथा सुर्वण बालक को चटाये। 2, 3 बूंद घी, 5-6 बूंद शहद में थोड़ा सा सुवर्ण पत्र (वरक) डाल कर उसे पीस लें और पिता बच्चे को चटा दे। सुर्वण स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त उत्तम है सोने के विषय में चरक में कहा है:-

"न सज्जति हेमपाङ्गे पद्मपत्रेऽम्बुवद् विषम्"

अर्थात्:- 'हेमप' (सोना) खाने वाले के अंग में विष ऐसे ही प्रभाव नहीं करता जैसे पानी में रहते हुये भी कमल पत्र पर पानी का प्रभाव नहीं होता।

जातकर्म संस्कार पर पिता बालक को घी, शहद तथा सुवर्ण का अवलेह बना कर चाटने को तथा सुवर्ण शलाका से जीभ पर 'ओ३म्' लिखने का विधान है यह सब काम माता-पिता करते हैं जब माता-पिता बच्चे की जीभ पर 'ओ३म्' लिखते तब से वह अपने ऊपर

एक बड़ी भारी जिम्मेवारी लेते हैं माता-पिता बच्चे को जिस माहौल में रखेंगे बच्चे पर उस वातावरण का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि बच्चा जन्म के पहले पांच वर्षों में जो कुछ सीख जाता है उसको वह कभी भी भूलता नहीं है। जीभ पर 'ओ३म्' लिखने का अर्थ है कि बालक के मुख से जो कुछ निकलेगा वह उसे अध्यात्म की ओर ले जायेगा परन्तु उस के मुख से अध्यात्म की बात तभी निकलेगी जब उसके भीतर अध्यात्म का संस्कार भरा होगा इसीलिये बालक के कान में पिता कहता है:-, **'वेदोसि'** अर्थात् तू ज्ञान वाला प्राणी है इसी प्रकार पिता अथवा गुरु बालक के कान में यह मन्त्र भी पढ़ता है:-

अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तृतं भव।
आत्माऽसि पुत्र मामृथाः स जीव शरदः शतम्।।

अर्थात्:- **अश्मा भव**—हे बालक तू पत्थर की भाँती दृढ़ बन **परशुर्भव**—कुल्हाडे की भान्ति शत्रु विनाशक बन, **'हिरण्यम् अस्तृतं भव**—सोने के समान तेजस्वी बन **'स जीव शरदः शतम्**—तू सौ वर्षों तक जीवित रह।

नामकरण संस्कार

नामकरण संस्कार भी बच्चे के जन्म के पश्चात् ग्यारहवें दिन करना चाहिये। इस संस्कार का इतना महत्त्व है कि इस संस्कार को हर एक करता है, संस्कार का सब व्यवहार नाम के आधार पर ही चलता है पारस्कर गृह्य सूत्र में नाम के बारे में लिखा है कि बालक का नाम दो अक्षर वाला या चतुर् अक्षर वाला होना चाहिये।

गृह्य सूत्र में लिखा है "द्व्यक्षरं चतुरक्षरं वा"

नक्षत्र के आधार पर बच्चे के नामकरण का प्रकार ज्यादा प्रचलित है ज्योतिष लोग भी नक्षत्र के आधार पर ही बच्चे का नामाक्षर निकालते हैं। संस्कृत वर्णमाला के विभिन्न अक्षरों के विभिन्न नक्षत्र अधिष्ठाता हैं वर्णमाला के अक्षर 52 है और नक्षत्र केवल 27 अतः प्रत्येक नक्षत्र के प्रभाव में एक से अधिक अक्षर आते हैं। बच्चे का नाम उस विशिष्ट नक्षत्र द्वारा अधष्ठित किन्हीं अक्षरों से आरम्भ होना चाहिये जैसे

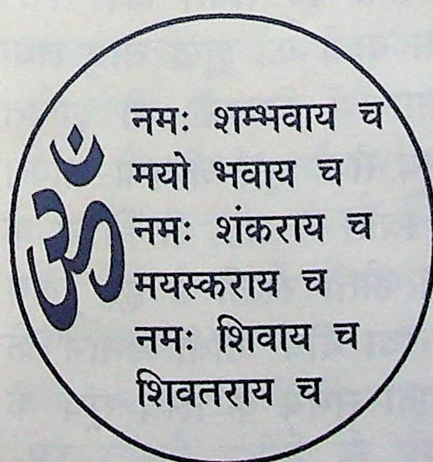
एक बच्चे का जन्म अश्विनी नक्षत्र पर हुआ हो तो उसका नाम इन अक्षरों च-चे-चो-ल पर होना चाहिये। यह बात याद रखें कि पिता अथवा कुल वृद्ध अथवा कुल गुरु को बच्चे का नाम नक्षत्र से सम्बंद्ध करना चाहिये।

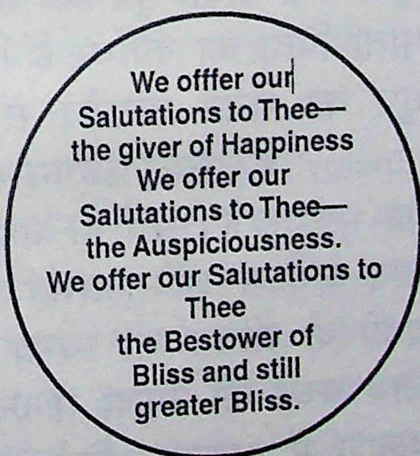
'नक्षत्र नाम सम्बद्धं पिता वा कुर्यादन्यो कुल वृद्धः गुरु वा-इति।

बच्चे के नाम का चुनाव सामान्यतः धार्मिक भावनाओं से सम्बन्धित रहता है, नाम उच्चारण में सरल तथा श्रवण-सुखद होना चाहिये, नाम लिंग भेद का द्योतक होना चाहिये, नाम यश, ऐश्वर्य, शक्ति आदि का द्योतक होना चाहिये, नाम किसी पूछताछ के बिना ही व्यक्ति की सामाजिक स्थिति को स्पष्ट करना चाहिये जैसे एक लेखक परिश्रम से कोई नई पुस्तक बनाता है तो पुस्तक का नाम ऐसा रखना चाहता है कि पुस्तक का नाम लेते ही पुस्तक के विषय में समझ आना चाहिये कि पुस्तक में किस प्रकार के विषय हैं, नाम बच्चे के भविष्य निर्माण में प्रमुख स्थान रखता है नाम अथवा शब्द का प्रभाव बिजली से भी अधिक प्रभावशाली है। किसी वस्तु को पहचानने तथा उसके सम्बन्ध में दूसरों के साथ व्यवहार करने में उसको कोई

नाम देना आवश्यक हैं प्रत्येक माता-पिता का कर्तव्य है कि सन्तान को ऐसा नाम दे जो उसे हर समय जीवन के किसी लक्ष्य तथा किसी उद्देश्य की याद दिलाता रहे। नाम के महत्त्व को ध्यान में रखते हुये इसे धर्म का अंग बना दिया गया है। नाम तो एक शब्द मात्र है परन्तु शब्द का बड़ा महत्त्व है। शब्द क्या है ? शब्द नाम ही दूसरा नाम है, प्रत्येक शब्द का नाम है जिससे हम किसी अर्थ को ग्रहण करते हैं। बच्चे का नाम चुनना बड़ा महत्त्वपूर्ण है। हमें सन्तान के लिये ऐसे नाम को चुनना चाहिये जिस में हमारी सभी मनोकामनायें समा जायें। जड़ पदार्थों का नाम नहीं रखना चाहिये। शुद्ध तथा ऊँची भावना वाला नाम रखना चाहिये।

शान्ति देने वाला मन्त्र





निष्क्रमण–संस्कार
सूर्य दर्शन – चन्द्र दर्शन

'**निष्क्रमण संस्कार**' का वास्तविक अर्थ है कि बालक को घर से बाहर जहाँ पर शुद्ध वायु हो वहाँ का भ्रमण कराना। निष्क्रमण संस्कार में बच्चे को सृष्टि की दो महान विभूतियों के दर्शन कराये जाते हैं पहला दर्शन '**सूर्य देवता**' का दूसरा '**चन्द्रमा देवता**' का है। शरीर तथा मन के विकास के लिये ठण्डी हवा तथा सूर्य की रोशनी की बहुत आवश्यकता होती है इसलिये बच्चे को यह संस्कार करने का विधान है ताकि बच्चा शुद्ध हवा तथा सूर्य की किरणों का सेवन कर सके। माता-पिता का कर्तव्य है कि बच्चे को शुद्ध वायु तथा धूप का सेवन कराये। संसार में जितनी भी शक्ति (Energy) है उसका उद्‌गम सूर्य से है सूर्य जीवनी-शक्ति का भण्डार है। सूर्य ही वह स्त्रोत है जहां से विश्व के कण-कण में शक्ति प्रभावित होती रहती है इस लिये बच्चे के जीवन को स्वस्थ तथा दीर्घ जीवी बनाने के लिये बच्चे को ज्यादा से ज्यादा समय के लिये सूर्य के प्रकाश में रखना चाहिये।

शरीर-रचना-विशेषज्ञों का कहना है कि हमारे शरीर के विकास के लिए कैल्शियम तथा फास्फोरस का शरीर में खपना जरूरी है जितने अंश में रुधिर में कैल्शियम की कमी होगी उतने ही अंश में मनुष्य बेचैन तथा चिड़चिड़ा रहेगा। विटामिन डी (Vitamin D) के बिना कैल्शियम शरीर में जज्ब नहीं होता है। विटामिन डी न दूध में है, न दही में है यह सूर्य किरणों से ही मिल सकता है इसलिये सूर्य की रोशनी का सेवन आवश्यक है ताकि 'विटामिन डी' प्राप्त हो सके और बच्चा कैल्शियम की कमी के कारण कमजोर न रहे एवं कैल्शियम तथा फास्फोरस दोनों धूप के प्रभाव से खप सकें। संसार का नियन्त्रण दो ही तत्त्व उष्णता तथा शीत करते हैं, शरीर में गर्मी ही जीवन का चिन्ह है शरीर का ठंडा होना जीवनी शक्ति में कमी का संकेत है, गर्मी, सर्दी, यह सब सूर्य की ही देन है इस कारण बालक को सूर्य दर्शन कराते हैं ताकि बालक भी सूर्य की तरह तेजवान् (तेजस्वी) बने।

निष्क्रमण संस्कार कब करना चाहिये?

"**चतुर्थे मर्सा निष्क्रमणिका**" अर्थात् जन्म के चौथे मास में निष्क्रमण संस्कार होना चाहिये इसमें भी अलग-अलग मत हैं किसी ने दो मास, किसी ने तीन मास, किसी ने चार मास कहे हैं परन्तु आमतौर पर तीसरे महीने के पश्चात् ही करते हैं निष्क्रमण

संस्कार में पिता बच्चे को गोद में उठा कर सूर्य का दर्शन कराते हुये यह मन्त्र पढ़ेः- **"त्वं जीव शरदः शतम् वर्धमानः"** अर्थात् बच्चा सौ वर्ष तक जीये और लगातार उन्नति करते रहे इसके अतिरिक्त यह मन्त्र पढ़ेंः-

"ओं तत् चक्षुदेर्वहितं पुरस्तात शुक्रमु च्चरत पश्येम शरदः शतम्"

तत्पश्चात् रात्रि में जब चन्द्रमा प्रकाशमान हो तब बच्चे की माता लड़के को शुद्ध वस्त्र पहना कर पिता के हाथ में बालक को दे तथा हाथ जोड़कर चन्द्रमा के सम्मुख खड़ी रह कर यह मन्त्र पढ़ेंः-

"ओं यददश्चन्द्रमसि कृष्णं पृथिव्या हृदयं श्रितम्"

अथर्ववेद में लिखा हैः-

शिवे ते स्तां द्यावापृथिवी असंतोष अभिश्रियौ।
शं ते सूर्य आ तपतुशं वातो वातु ते हृदे।
शिवा अभि क्षरन्तु त्वापो दिव्याः पयस्वतीः।

अर्थात्ः- हे बालक ! तेरे निष्क्रमण के समय द्युलोक तथा पृथ्वीलोक कल्याणकारी सुखद एवं शोभास्पद हों। सूर्य तेरे लिये कल्याणकारी प्रकाश करे, तेरे हृदय में स्वच्छ कल्याणकारी वायु का संचरण हो–दिव्य जल वाली गंगा-यमुना आदि नदियां तेरे लिये निर्मल स्वादिष्ट जल का वहन करे।

अन्नप्राशन संस्कार

संस्कारों की कतार में अन्नप्राशन संस्कार सातवां संस्कार है। अन्नप्राशन का अर्थ है जीवन में पहले-पहल अन्न का खाना। जन्मते ही बच्चे को मां का दूध मिलता है उस समय अन्न चबाने के लिये न तो उसके दांत होते हैं ना ही हज़्म करने की शक्ति। बच्चे को जन्म लेते ही जिस भोजन की आवश्यकता है उसका प्रबन्ध परमात्मा ने पहले ही करके रखा है वह है मां का दूध। इसके साथ ही प्रकृति ने दूध पिलाने का समय निश्चित करके रखा है। जब बच्चे के दांत निकलने लगें तब समझ लेना चाहिये कि बच्चा अब अन्न चबा सकता है इस कारण अन्न की ओर ध्यान देना चाहिये प्रायः छटे महीने में बच्चे को दांत निकलने लगते हैं इस कारण अन्न प्राशन संस्कार का समय भी छटे महीने में होता है—पारस्कर गृह्यसूत्र में **"षष्ठे मासि अन्नप्राशनम्"** अर्थात् छटे महीने में अन्न प्राशन-संस्कार होना चाहिये। दूध छोड़ने में बच्चे को तीन, चार मास लग ही जाते हैं अन्न के साथ-साथ बच्चे को शारीरिक पुष्टि के लिये

कुछ चाटने के लिये भी देना चाहिये। आश्वलायन गृह्यसूत्र में लिखा है **"दधिमधु घृतमिश्रितं अन्नं प्राशयेत्"** अर्थात् अन्न प्राशन में बच्चे को दही, शहद तथा घी को मिलाकर चटायें। दीर्घ जीवन के लिये दही, शहद तथा घी की बहुत आवश्यकता है। वैदिक संस्कृति में हम सौ वर्ष तक जीने की प्रार्थना करते हैं इस कारण अन्न प्राशन संस्कार के समय दही, घी तथा शहद चटाना विज्ञान तथा शास्त्र सम्मत है।

बच्चे को दूध से एक दम अन्न पर नहीं लाना चाहिये। बच्चा आरम्भ में '**क्षीराद**' (दूध पीने वाला) होता है छटे महीने के बाद उसको अन्न प्राशन-संस्कार हो जाता है तब वह - '**क्षीरान्नाद**' (दूध और अन्न खाने वाला) हो जाता है। अन्न प्राशन-संस्कार तथा दान्त निकलने के समय का एक दूसरे के साथ घनिष्ठ संबंध है। अन्न प्राशन तभी किया जाता है जब दान्त निकलने लगते हैं, दान्त निकलते समय बच्चे के शरीर में उथल-पुथल मच जाती है।

मनुष्य की विचार शृंखला, भावना, आकांक्षा एवं अन्तरात्मा अन्न पर ही निर्भर है, अन्न से ही जीवन तत्त्व मिलते हैं जिससे रक्त मास आदि बन कर जीवन का नया आरम्भ हो जाता है। अन्न ही मनुष्य का

स्वाभाविक भोजन है। इस शुभ संस्कार पर देवताओं की पूजा करके माता-पिता बच्चे को चांदी के चम्मच से खीर आदि पवित्र और पुष्टिकारक अन्न चटाते हैं और निम्न मन्त्र पढते हैं।

शिवौ ते स्तां ब्रीहियवाव् बलासव दोमधौ।
एतौ यक्ष्मं वि बाधेते एतौ अंहमः।

अर्थात्: हे बालक! जौ और चावल तुम्हारे लिये बलदायक तथा पुष्टिकारक हों क्योंकि ये दोनों वस्तुयें क्षय-रोग नाशक हैं तथा देवान्न होने से पापनाशक भी हैं।

यदि आप अपने जीवन को सफल बनाना चाहते हैं। तो अपने माता-पिता की सेवा करके उनसे आशीर्वाद प्राप्त करें।

अपने से बड़ों को हाथ जोड़कर, सिर झुका कर, तथा पांव स्पर्श करते हुये प्रणाम् करें।

चूड़ा कर्ण
(ज़रकासय)

चूडा कर्म संस्कारों की शृंखला में आठवां संस्कार हैं इस के लिये और शब्दों का प्रयोग भी किया जाता है जैसे मुण्डन संस्कार, चूडा कर्ण तथा क्षौर कर्म। संस्कृत में 'चूड़ा' शब्द शिखर या चोटी के लिये प्रयुक्त किया जाता है। हिन्दी का 'जूड़ा' शब्दा 'चूडा' का ही अपभ्रंश है। चूडाकर्म संस्कार को हम 'ज़रकासय' संस्कार कहते हैं तथा यह संस्कार प्रत्येक व्यक्ति वैदिक रीति से करता है।

धर्म शास्त्र, स्मृति इत्यादि के अनुसार चूडाकर्म संस्कार दीर्घायु प्राप्ति के लिये किया जाता है सुश्रुत में लिखा है।

पापोपशमनं केश नख रोमापमार्जनम्।
हर्ष लाघव सौभाग्य करमुत्साहवधर्नम्।।

अर्थात्:- केश, नख, रोम के छेदन से लाघव (आरोग्य, फुर्ती) सौभाग्य और उत्साह में वृद्धि तथा

पापों का नाश होता है। चरक कहता है।

पौष्टिकं वृष्यमायुष्यं शुचिरूपं विराजनम्।
केशश्मश्रुनखादीनां कर्तनं सम्प्रसाधनम्।।

अर्थात्:-केश, आंसू तथा नखों के काटने तथा प्रसाधन से पौष्टिकता बल, आयुष्य, शुचिता और सौन्दर्य की प्राप्ति होती है। कई महानुभावों का मत है कि इस संस्कार का प्रयोजन बलि या अर्थात् केश काट कर किसी देवता को अर्पित कर दिये जाते थे परन्तु जहां तक हिन्दू चूडाकर्म विधि-विधानों का प्रश्न है यह सत्य नहीं है चूडाकर्म का बलि के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है चूडाकर्म संस्कार कोई किसी मन्दिर या देवालय में सम्पन्न करता है इसका तात्पर्य यह नहीं है कि हम किसी देवता को बलि देते हैं। चूडाकर्म संस्कार में केवल वैदिक मन्त्र पढे जाते हैं यह बात स्पष्ट है कि वैदिक काल में भी चूडाकर्म एक धार्मिक संस्कार था जिस में वैदिक मन्त्रों के साथ केश छेदन किया जाता है तथा दीर्घायु, समृद्धि इत्यादि के लिये कामना की जाती है।

शरीर में सब अंग अपने-अपने काम की दृष्टि से मुख्य हैं परन्तु मस्तिष्क का सब से मुख्यस्थान है मनुष्य

का मस्तिष्क दो भागों में बंटा हुआ है (1) बृहत्-मस्तिष्क Cerebrum तथा लघुमस्तिष्क (Cerebellum) यह दोनों भाग ज्ञान तथा क्रिया के केन्द्र हैं इसी से पांचों ज्ञानेन्द्रियों तथा पांचों कर्मेन्द्रियों का संचालन होता है यह सारी मशीनरी खोपड़ी के भीतर रहती है मस्तिष्क को ढकने वाली खोपड़ी के कई भाग हैं जो बचपन में ठीक प्रकार से जुड़े नहीं होते, इन भागों के जुड़ने को अस्थि-सन्धि कहते हैं खोपड़ी की अस्थियों की सन्धियां तीन साल से पहले नहीं जुड़ती, इसी कारण गर्भावस्था में ही शिशु के सिर पर बाल होते हैं ताकि शिशु की खोपड़ी की रक्षा हो तथा खोपड़ी के भीतर का मस्तिष्क सुरक्षित रहे। तीन वर्षों के पश्चात् खोपड़ी की अस्थियां झुड जाती है और गर्भावस्था के बालों को छेदने का समय आ जाता है वेद में लिखा हैः- '**दीर्घायुत्वाय**' दीर्घ आयु के लिये क्षौर कर्म करना चाहिये।

शास्त्रों में चूडा कर्म संस्कार करने के विषय में लिखा हैः-

"चूडाकर्म द्विजातीनां सर्वेषमेव धर्मतः।
प्रथमेऽब्दे तृतीय वा कतर्व्यं श्रुतिचोदनात्।।"

अर्थात्ः-वेदों के नियमानुसार धर्मपूवर्क समस्त द्विजातियों का चूडा कर्म संस्कार प्रथम अथवा तृतीया

वर्ष में सम्पन्न होना चाहिये।

कई शास्त्र कारों का मत है कि यह संस्कार यज्ञोपवीत के साथ ही करना चाहिये अर्थात् पांचवे वर्ष में क्योंकि वैदिक काल में यज्ञोपवीत सस्कार पांचवें वर्ष में करते थे इसी कारण उन्होंने कहा है '**तृतीये पंचमे वाब्दे चौलकर्म प्रशस्यते**' अर्थात् तीसरे या पांचवें वर्ष में चूडाकर्म संस्कार करना चाहिये। वैज्ञानिक दृष्टि से चूड़ा कर्म संस्कार तीसरे वर्ष में करना चाहिये।

चूडा कर्म संस्कार करते समय वैदिक मन्त्रों को पढ़ा जाता है जब बच्चे के बाल काटे जाते हैं तो नाई को भी वेद मन्त्रों से सम्बोधित किया जाता है जैसेः- '**उष्णेन उदकेन एहि**' अर्थात् गरम जल लेकर आओ और उस्तरे को गरम पानी में डालकर शुद्ध कर लो। उस्तरे के लिये भी मन्त्र पढते हैं जैसेः- '**स्वछिते मैनं हिंसीः**' अर्थात् हे कठोर लोहमय उस्तरे बालक को पीडा मत पहुंचाना। इन मन्त्रों का आशय है कि नाई (नापित) को अपना उस्तरा ठीक से उबालना चाहिये ताकि उस में रोग के कोई कीटाणु न रहे तथा बालक का मुण्डन बड़ी होशियारी से करना चाहिये ताकि बच्चे को कोई क्षति न पहुँचे।

'शिखा' रखना चूडाकर्म संस्कार का महत्त्वपूर्ण अङ्ग है इस संस्कार में बालक को चूड अर्थात् 'शिखा' चोटी रखी जाती है। 'शिखा' हमारी ज्ञान शक्ति, बुद्धि, बल, आयु तथा तेज को बढ़ाती रहती है। यह विज्ञानानुकूल बात है कि काली वस्तु सूर्य के किरणों में से अधिक ताप तथा शक्ति का आकर्षण किया करती है। हमारे शास्त्रों ने बुद्धि को सूर्य का अंश माना है इसलिये हम प्रतिदिन गायत्री मन्त्र से भगवान् सूर्य की उपासना करते हैं और उनसे बुद्धि का दान मांगते हैं इस विषय में पाश्चात्य वैज्ञानिक कहते हैं।

Sun is the first cause of life इस कारण हमारे ऋषियों ने मस्तिष्क पर बालों का एक गुच्छा रखने का विधान किया है जिसके द्वारा हम सूर्य से प्रकाशिन् शक्ति का विशेष आकर्षण करके अपनी बुद्धि को उन्नत बना सकते हैं सुप्रसिद्ध पाश्श्चात्य विचारक एवं वेद भाष्यकार मैक्समूलर ने शिखा द्वारा प्राप्त होने वाली शक्ति के विषय में लिखा है।

The Concentrations of mind upwords sends a rush of this power through the top of the head.

अर्थात्:- 'चूडा' शिखा के द्वारा मानव मस्तिष्क

सुगमता से शक्ति के प्रवाह को धारण कर सकता है।

शारीरिक विज्ञान के अनुसार जिस स्थान पर शिखा रखी जाती है Pinal Jwend कहा जाता है उसके नीचे एक विशेष प्रकार की ग्रन्थि होती है जिसको (Pituetry) कहते हैं इसमें एक प्रकार का रस बनता है जो स्नायुओं द्वारा सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त होकर शरीर को बढ़ाता और बलशाली बनाता, शिखा द्वारा इन ग्रन्थियों को अपना कार्य करने में बड़ी सहायता मिलती है इस से मनुष्य को दीर्घायु तथा ज्ञान शक्ति में वृद्धि होती है।

भारतीय विचारकों के अनुसार सम्पूर्ण मानव शरीर में एक मुख्य नाडी है जिसे सुषुम्ना कहते हैं यह मस्तिष्क में जाकर समाप्त होती है उसकी रक्षा हिन्दू लोग चोटी रख कर ही करते हैं।

प्रकृति ने मनुष्य शरीर को यद्यपि इतना सबल बनाया है परन्तु फिर भी शरीर में कुछ ऐसे स्थान हैं जिन पर आघात होने से मनुष्य की तत्काल मृत्यु होती है ऐसे स्थानों को "मर्म" कहते हैं, 'शिखा' के नीचे जहां पर सम्पूर्ण नाडियों तथा सन्धियों का सन्निपात है उसे मर्म स्थान कहते हैं, यहां पर चोट लगने से मृत्यु हो सकती है।

इस प्रकार धार्मिक, वैज्ञानिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से 'शिखा' का मानव जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान है परन्तु समय के साथ-साथ 'शिखा' रखने की प्रथा कम होती गई तथा आजकल सभी सिर पर बाल ही रखते हैं परन्तु भारत के कई स्थानों पर आजकल भी शिखा रखने की प्रथा चलती है तथा कहीं पर इसका लोप ही हो गया है।

बाल काटने की विधिः- बाल काटते समय कुश-सहित केशों को काटे, केश क्रमशः दक्षिण, उत्तर, पीछे और आगे काटने हैं प्रत्येक ओर से केश चार-चार बार काटने हैं प्रथम बार '**येनावपत्**' दूसरी बार में '**येन द्याता**' तीसरी बार '**येन भूयश्च्च**' चौथी बार '**येनावपत्** + **येन धाता** + **येन भूयश्च्च** + **येन पूषा** अर्थात् चारों मन्त्र से केश काटें। चौथी बार आगे के बाल काटते समय '**येन भूरिश्च्च**' मन्त्र पढना चाहिये। यह सभी बाल किसी 'टाकू' में रखने चाहिये। टाकू में 3 अखरोट भी रखने चाहिये तथा यह बाल अखरोट सहित किसी स्वच्छ स्थान पर जमीन में बोने चाहिये।

यह बाल पिता अथवा गुरुजी किसी ब्लेड या कैंची से काटेगा तत्पश्चात् नाई अपना काम करेगा। बाल काटने के पश्चात् मक्खन अथवा दही की मलाई सिर पर लगानी चाहिये। तत्पश्चात् नहाना चाहिये।

कर्णविध संस्कार

(कान छेदन संस्कार)

कर्ण वेध संस्कार संस्कारों की श्रंखला में नवां संस्कार है इसके विषय में लिखा है '**कर्ण वेधो वर्षे तृतीये पंचमे वा**' अर्थात् कर्ण वेध संस्कार तीसरे या पांचवे वर्ष में करना चाहिये। कर्ण वेध का अर्थ है कान को छेद करना। हमारे शास्त्रों, स्मृतियों से प्रतीत होता है कि भारत में कान बीधने का काफी प्रचलन था तथा संस्कारों में भी यह एक महत्त्वपूर्ण संस्कार गिना जाता है इस संस्कार के लिये कुछ समय पूर्व **विजयेश्वर पंचाग** में 'कर्ण वेध मुहूर्त' जी लिखे जाते थे यह संस्कार दोनों लड़के तथा लड़की को भी किया जाता था परन्तु बहुत समय से इस संस्कार में कुछ शिथिलता आई और यह लड़कियों तक सीमित रहा है, लड़कियों को आभूषण पहनने के लिये कर्ण वेध किया जाता है।

कर्ण वेध का महत्त्वः- सश्रुत में लिखा है।
"रक्षा भूषण निमित्तं बालस्य कर्णौ विध्येते"
अर्थात् बालक के कान दो उद्देश्यों से बींधे जाते हैं एक

उद्देश्य है बालक की रक्षा दूसरा उद्देश्य है बालक के कानों में आभूषण डाल देना। वैज्ञानिक दृष्टि से कान छेद करने से ऐसी नस छिद जाती है जिस का सम्बन्ध आंतों से है। इस नस के छिद जाने से आन्त्र वृद्धि (Hernia) नहीं होता है।

सुश्रुत के अनुसार कान का बींधना अन्त्र वृद्धि को रोकने के लिये किया जाता है आजकल यह काम सुनार या कोई भी व्यक्ति इस काम को कर देता है जो कि बिल्कुल गलत है। सुश्रुत में लिखा है:-

"भिषक् वामहस्तेन-आकृष्य कर्ण दैवकृते छिद्रे आदित्यकरावभास्विते शनैः शनैः ऋजु विद्धयते।"

अर्थात्:- वैद्य अपने बायें हाथ से कान को खींच कर देखे जहां सूर्य की किरणें चमकें वहां देवकृत-छिद्र में धीरे-धीरे सीधे बींधे। अर्थात् कान को बीन्धने का काम भिषक् (भिषज्) का ही है। देवकृत छिद्र इसलिये कहा है क्योंकि कान के जिस स्थान से सूर्य की किरण चमके वह पतला स्थान भगवान् का जन्म से ही दिया गया है।

कर्ण वेध संस्कार के समय बालक को सामने रखकर यह मन्त्र अवश्य पढें:-

(इस मन्त्र से दक्षिण कान को बीधें)

'ओं भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्य
माक्ष भिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभि
र्व्यशेमहि देव हितं यदायुः (यजु)'

अर्थात्:–हे विद्वान् लोगो ! हम कानों से अनुकूल ही सुने और नेत्रों से अच्छी वस्तुओं को देखे, दृढ़ अंगों से आपकी स्तुति करने वाले हम लोग कल्याणकारी आयु प्राप्त करें।

इस मन्त्र से वामकर्ण (बायां कान) को बीधें।

"ओं वक्ष्यन्ती वेदा गनी गन्ति कर्णं प्रियं
सखायं परिषस्व जाना।
योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्वन् ज्या इयँ
समने पारयन्ती।। (यजु)

अर्थात्:– वीर पुरुषों को चाहिये कि कवच और धनुष के तुल्य, धनुष की डोरी से भी अपनी प्रिय पत्नी के तुल्य स्नेह रखें क्योंकि वह विजय दिलाने वाली और रोगों से मुक्त करने वाली है।

तत्पश्चात् उन छिद्रों में शलाका रखे कि जिससे छिद्र बन्द न हो जायें और ऐसी औषधि उस पर लावें जिसे कान पकें नहीं और शीघ्र ठीक हो जायें।

यज्ञोपवीत

यज्ञोपवीत सस्कारों का कताग में दसवें स्थान पर है यज्ञोपवीत में हम सब से पहले किसी अच्छे मुहूर्त पर बच्चे को मेहन्दी लगाते है जिस के 'घरनावय' कहते है। घरनावय पर हम अपने मकान कि दीवारों पर कुछ पेंटिंग जैसे बनातें है जिस को 'क्रूल' कहते हैं स्त्रियां इस अवसर पर का वनवुन करती हैं।

यज्ञोपवीत में फिर मेहन्दी रात तथा देवगौण का संस्कार भी आता है देव गौण था अग्नि जला कर वैदिक रीति के अनुसार पूजा की जाती है तथा बच्चे को अर्घ्य के पानी से नहलाया जाता है तत्पश्चात् यज्ञोपवीत संस्कार की तैयारी की जाती है देवगौण पर भी स्त्रियां वनवुन करती हैं।

तत्पश्चात् यज्ञोपवीत के लिये यज्ञ कुण्ड बनाया जाता है धर्म शास्त्र के अनुसार यज्ञ कुण्ड पृथ्वी के ऊपर बनाया जाना चाहिये हम में जो प्रथा प्रचलित है कि कुण्ड खोद कर चाहिये वह धर्म शास्त्र के विरुद्ध है। भूमि पर यज्ञ कुण्ड ईटों से बनाया जाता है इस

कुण्ड की लम्बाई 45 इंच चौड़ाई 45 इंच होनी चाहिये तथा तीन वेदियां बनानी चाहिये। यज्ञ कुण्ड बनाते समय भी स्त्रियां 'वनवुन' करती हैं।

मेखला वनवुन

शोकलम् करिथ वनवुन द्योतुय।
शोभ फल दितुय मंअज भवानी।।
स्वर्ग पेठ अनंतहोन पंड़िता छुारिथ।
अग्न कोण्ड़स क्युत दिथि साथ चारिथ।।
नवि नेशपतरे रुत द्राव साथा।
जंगि हुन्द दाता छु श्री भगवान।।
सोनसन्दि टोंगरे रोपसन्दि बेलो।
बालय वालुस शेलै म्यच़।।
मेचि़ तय पअनिस खअच़ खम्बीरो।
गम्भीर खोरमय अग्नय कोण्ड़।।
नाराण जुवस मागय मंगे।
कन्यक ज़न्नो अनहोसे।।
अग्न-कोण्ड़स ज़न्नि कुस ओयो।
मंगला दीवी त नन्दकीश्वर।।
अग्नचि ज़ंगे क्या-क्या पजे़।

नून वरह तय मोहरा प्रास।।
अग्नय-कोण्ड़स सोन सन्ज़ सेरे।
ज़ेरि-ज़ेरि खोरमय अग्नय कोण्ड़।।
पण्डितव वेद हेच़ पननिस च़ाटस।
रातस कोरहय हुमुक सन्ज़।।
खोरन लव दिव ज़पके ज़ोरो।
गोरो वन्दयो पादन रथ।।
कलशस खारी त्रिशूल डूनी।
ब्रह्मा, विष्णु त महेश्वर।।
कलशस खारुस बादाम सासा।
दासस रूमय-ऋषुन आय।।
नारीवन थाजी अनिथय मन्यानाविथ।
कमि वान अनिथय रंगनाविथ।।
वासदीय राज़नि अनतय माली।
दअंतन सअति तार नारीवन।।
वासदीव राज़नि वानेनि कूरी।
कानी पेठ खार नारीवन।।
दीवख राज़नि लायख हारी।
छायख नारीवनन छुय।।

टेकि पूचि़ चोन पाटि किनारी।
बजि बेनि हारी नारीवन हाव।।
टेकि पूचि़ चाने अतिर्लि वथर।
शत्र पेयई पादन तल।।
पत ब्रोंह वुछयो बब इन्द्राज़न।
मामन खोरखो कोछे केथ।।
यारबल खसिथ गोरस निश चा़खो।
ज़ाखो इन्द्र करने क्युत।।
मालिस खोवरी गोरस दछनी।
वनि चे़ रछिनय नारायण।।
कोङ्ग तय सेन्द्रे वलियो ब्राटी।
ब्रह्मणन पिलवुस श्राण पठ।।
दय सन्दि धर्म त इन्द्र सन्दि दान।
ब्रह्मणन पिलवुस श्राण पठ।।
वासदीव राज़नि ज़ेछि ज़ेछि कपसे।
दपसे करसे योने हन।।
रथि वोथ तोस तय अथि व्यसनोवमय।
तथि करनोवमय योने हन।।
मासव व्यसनोव तोसय फोतुय।

पोफव कोतुय कलाबोत।।
दिवकी व्यसनोव कनिकव कोतुय।
योन्या लोदय नाराणी।
दोहस गिन्दुथम तासन त खासन।
मासन ति गोवहम अबीदे।।
अथन लाजिमय सोन सनिज़ वाजे।
माजेन गोवहम अबीदे।।
श्रीफल सअती करिव आदि दर्शुन।
सोफल लक्ष्मी वअतिनव।।
सुलमान मेच़ तय गङ्गय वाने।
सुभद्राये खोरयो वारे दान।।
वारिदान खोरनय सुभद्राये।
अर्ज़न दीवनि भार्याये।।
हरमोख पेठचे बजि गङ्गाये।
सोन सन्ज़ि गङ्गज़े रोप सन्दि ठान।।
वारेदानस सन्द्राव च़न्दन गणय।
वनय वालुस तोलसी काठ।।
वारि भत रोणमय गजूर लशे।
होदय शीशे कअरिजेस़।।

गोरन वोननय कन तअलि शब्दा।
रबदा नीरिनय राम सुन्द ह्यूव।।

यज्ञोपवीत संस्कार पर हम पहले से किये हुये सभी संस्कारों को फिर से दोहराते हैं जो कि बिल्कुल गलत है यह प्रथा सदियों से चली आ रही है इसका बदलाव समयानुसार ज़रूरी है जैसा कि धर्म शास्त्र भी कहता है कि समयानुसार हम कुछ परिवर्तन कर सकते है।

टेकि पूचः हमारे प्रत्येक संस्कार में मातृ शक्ति का एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है तथा हम घर पर जो भी संस्कार करते है उस में हमारे नज़दीकी रिश्तेदारों का एक अहम स्थान होता है उन को चिह्वित करने के लिये एक प्रकार का चिह्न उनके सिरों पर रखा जाता है जिस को टेकि पूच कहते है पहले पहल यह सफेद कपड़े की होती थी जिस पर गुरु केसर से श्री चक्र बनाते थे तथा वह सिर पर रखी जाती थी परन्तु आजकल 'कागज़ पर श्री चक्र बनाते है तथा सिर पर रखते हैं।

यज्ञोपवीत संस्कार संस्कारों की कतार में दसवां संस्कार है यह 24 संस्कारों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इस संस्कार को मेखला, यज्ञोपवीत, उपनयन,

उपायन, गायत्री तथा ब्रह्मसूत्र एवं द्विजसंस्कार भी कहते हैं। इस दिन हम काश्मीरी पण्डित यज्ञोपवीत के अतिरिक्त और बारह संस्कारों का सम्पादन भी करते हैं वे संस्कार हैं:-

(11) त्रैविद्यक (12) उपाकर्म (13) चातुहोतृकम्-अप वर्गो चातुहोतृकम् (14) प्रवर्ग्य व्रत, अपवर्गो प्रवर्ग्य व्रत (15) अरुण व्रत (16) अपवर्गो अरुण व्रत (17) औपनिषद्ध व्रत (18) श्री काम (19) यशस्कवाम (20) अपवर्गो शौपनिषद्ध व्रत (21) गोदान (22) अपवर्गो त्रैविद्यक यह सब संस्कार गुरुकुल में वेदाध्ययन करते-करते किये जाते थे परन्तु अब गुरुकुलों की प्रथा बदल गई है इस कारण यह सभी संस्कार यज्ञोपवीत पर ही करते हैं इन संस्कारों का सम्बन्ध केवल वेदाध्ययन के साथ है आजकल वेदाध्ययन में परिवर्तन आया है बच्चे विद्या के अलग-अलग क्षेत्रों में जाते हैं तथा उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं यह भी वेद का ही पर्याय नाम है। वेद किस को कहते हैं? वेद कहते हैं ज्ञान को। आजकल बच्चे गुरुकुलों के बदले विश्वविद्यालयों में जाकर ज्ञान प्राप्त करते हैं अर्थात् वेद का अध्ययन करते हैं। आजकल गुरुकुलों का स्थान विश्वविद्यालयों ने लिया है। इसी कारण आजकल यज्ञोपवीत संस्कार



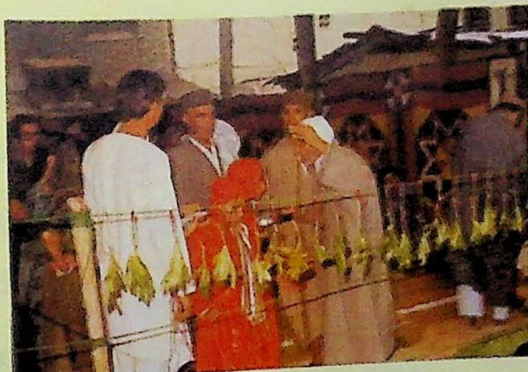
यज्ञोपवीत सस्कार
करते हुये विद्ववान



ब्रह्मचारियों को वेद मंत्र
समझाते हुये पण्डित जी



पण्डित जी यजमान
को यज्ञोपवीत के विषय में
समझाते हुये।



अपने घर के पूर्वज
ब्रह्मचारी को
यज्ञोपवीत
धारण कराते हुये

बच्चों को 20, 22 वर्ष की आयु में किया जाता है। मैंने ऊपर लिखा हैं कि यज्ञोपवीत को कई नामों से पुकारा जाता हैं जैसेः-

मेखलाः- मे + ख+ ला = मेखला **मे**-यया मेधया (जिस बुद्धि से) ख = ब्रह्म (परमात्मा) **ला=जानाति**-जाना जाता है अर्थात् जिस बुद्धि से परमात्मा को जाना जाता है उसको **मेखला** कहते हैं। अथवा मेखला कहते हैं दर्भ के घास से बनी हुई तीन लडी वाली रस्सी को। यह रस्सी गुरु शिष्य के कमर में बांधता है अर्थात् शिष्य को इस बात के लिये तैयार करता है बेटा ! आपने इस मनुष्य जन्म में नर से नारायण, पुरुष से पुरुषोत्तम तथा मानव से महान् बनना है अतः उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये तैयार हो जाओ और कहता है।

उतिष्ठत! जाग्रत! प्राप्य वरान्-निबोधत
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया
दुर्गं पथस्तत कवयो वदन्ति।

अर्थात्:- हे मनुष्यो ! उठो, जागो-सावधान् हो जाओ, महापुरुषों को पा कर तथा उनके पास जाकर उस परमेश्वर को जान लो, ज्ञानी लोग उस तत्त्वज्ञान मार्ग को छुरे के सदृश अत्यन्त कठिन बतलाते हैं। ऐसे

दुस्तर मार्ग को पार होने का सरल उपाय वह अनुभवी महापुरुष ही बता सकते हैं जो स्वयं इसे पार कर चुके हैं।

यज्ञोपवीतः- यज्ञोपवीत दो शब्दों से बना है यज्ञ+उपवीत अर्थात् यज्ञ को प्राप्त करने वाला। वेद में लिखा है **"यज्ञो वै विष्णुः"** परमात्मा को प्राप्त करने वाला।

"यज्ञार्थं उपवीतं यज्ञोपवीतम्": अर्थात् यज्ञ के लिये जो सूत्र धारण किया जाये, जिसके धारण करने पर मुनष्य को यज्ञ करने का अधिकार प्राप्त हो 'उसे **यज्ञोपवीत**' कहते हैं इस संस्कार पर गुरु अथवा पिता शिष्य के गले में यज्ञोपवीत डालता है जो यज्ञोपवती तीन लड़ी वाला होता है तीन लड़ी का अभिप्राय है कि आप पर तीन प्रकार के ऋण हैं यह तीन लड़ी वाला यज्ञोपवीत क्रमशः तीन ऋणों का सूचक है वे हैं (1) **ऋषि ऋण (2) पितृ ऋण (3) देव ऋण।**

(1) ब्रह्मचर्य धारण करके वेद विद्या के अध्ययन करने से **ऋषि ऋण** तथा धर्म पूर्वक गृहस्थाश्रम में प्रवेश करके सन्तानोत्पति से **पितृ ऋण** तथा गृहस्थ का त्याग करके देश सेवा में अपने आप को लगाने से **देव ऋण** से मुक्ति मिलती है।

उपायन:- उपायन निकट जाना, शिष्य बनना, किसी धार्मिक संस्कार में व्यस्त रहना, शिष्य गायत्री मन्त्र की दीक्षा प्राप्त करने के लिये गुरु के पास बार-बार जाता है इस कारण इस संस्कार को 'उपायन' भी कहते हैं।

उपनयन:- उपनयन का शब्दार्थ है **उप**=समीप, **नयन**=ले जाना। विद्याध्ययन के लिये गुरु या आचार्य के समीप ले जाने को उपनयन कहा जाता है। गुरु के समीप हो जाना।

लिखा भी है: **"उप समीपे आचार्यादीनां बटोंनयनं प्रापणमुपनयनम्"**।

अर्थात्:- वह कृत्य जिस के द्वारा बालक आचार्य के समीप ले जाया जाये।

इस संस्कार में गुरु शिष्य को कहता है:

मम व्रते ते हृदयं दधामि
मम चित्तं अनुचितं ते अस्तु
मम वाचं एकमना जुषस्व
बृस्पतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्

अर्थात्:- गुरु बालक को आश्वासन देता है कि तेरे हृदय को मैं अपने हृदय में लेता हूँ तेरे चित्त को अपने चित्त में लेता हूँ, गुरु तथा शिष्य एक-दूसरे के

इतना निकट आने का प्रयत्न करते हैं कि वे 'एकमना' हो जायें, एक दूसरे के प्रति दुविधा में न रहें। गुरु शिष्य के प्रति प्रतिज्ञा करता है कि तेरा चित्त और तेरा हृदय मैं अपने हाथ में लेता हूँ और भविष्य के जीवन के लिये तेरे दिमाग और दिल के सही निर्माण की जिम्मेदारी अपने हाथ में लेता हूँ।

शिष्य को '**अन्तेवासी**' भी कहते हैं अन्तेवासी का अर्थ है जो गुरु के अन्दर तक बसा हुआ है।

यज्ञोपवीत संस्कार पर हम ब्रह्मचारी को दण्ड, भिक्षा पात्र, मेखला तथा कौपीन धारण कराते है।

1. दण्ड धारण करना:-यज्ञोपवीत संस्कार में आचार्य ब्रह्मचार्य के हाथ में दण्ड देता है, दण्ड धारण करने के दो उद्देश्य हैं, दण्ड के द्वारा वह अपनी रक्षा कर सकता है, प्राचीन काल में गुरुकुल जंगलों में होते थे। वेद में कहा है **"पर्वतानाम् उपस्थे नदीनाम् संगमे धियो विप्राः अजायत"।**

अर्थात्:- पर्वतों की घाटियों में, नदियों के संगम में बने आश्रमों में बुद्धिमान विप्रों का निर्माण होता है। जंगल में रहने के कारण हिंसक जीवों से आत्म-रक्षा के लिये दण्ड का होना अनिवार्य था, इस से जहां अपनी रक्षा होती थी तथा दूसरों की भी रक्षा हो

सकती थी इसका तात्पर्य है कि अपनी रक्षा के लिये तथा दूसरों की रक्षा के लिये हथियार रखना अनिवार्य है।

2. भिक्षा करना:- यज्ञोपवीत संस्कार पर ब्रह्मचारी के लिये भिक्षा करना भी इस संस्कार का आवश्यक अंग है, ब्रह्मचारी को भिक्षा से जो प्राप्त होता था वह आचार्य के चरणों में रखता था, ब्रह्मचारी किसी भी घर का हो, अमीर हो या गरीब, राजा हो या रंक–हर ब्रह्मचारी के लिये भिक्षा करना आवश्यक था। भिक्षा करने में हर एक को अहंकार फेंकना पड़ता है। जैसे भगवान् कृष्ण राजवंश के थे, सुदामा साधारण ब्राह्मण घराने के थे दोनों अपना अहंकार छोड़ कर गुरु के चरणों में बैठे थे। जो बालक भिक्षा करता है वह कितने ही बड़े राजा-महाराजा, सेठ, धनाढ्य का पुत्र क्यों न हो आप अपने को समाज में समान्य स्थिति के बालक के स्तर पर ले आता है। भिक्षा का वास्तविक अर्थ है :- समाज द्वारा खड़ा किये गये अपने ऊंच-नीच के भेद-भाव को समाप्त करना। वैदिक-संस्कृति में बालपन से ही हर बालक का दूसरे के समान होने का भाव अक्षराभ्यास करने के समय से ही दिमाग में डाल दिया जाता था।

वर्मा में भी विद्यार्थी भिक्षा-वृत्ति से अपनी पढ़ाई पूरी करते हैं। यह प्रथा वर्मा में सब के लिये आवश्यक है चाहे वह गरीब हो या अमीर। हर परिवार को अपने बालक को भिक्षु-केन्द्र में कुछ समय के लिये शिक्षा ग्रहण करने के लिये भेजना पड़ता है।

मेखलाः- धर्म (कुशा) के घास से बनी हुई तीन लड़ी वाली रस्सी को मेखला कहते हैं यह रस्सी गुरु ब्रह्मचर्य के कमर में बांधता है।

कौपीनः- कौपीन का अर्थ है—लंगोट। लंगोट का उद्देश्य ब्रह्मचारी को वीर्य-रक्षा में सहायता करना है। कौपीन धारण करने से जहां मनुष्य चुस्त रहता हैं वहां उस का ध्यान-विषय वासना की तरफ भी नहीं जाता, कौपीन धारण करना इस संस्कार का अंग बना दिया गया है और कौपीन धारण करते समय यह मन्त्र पढ़ा जाता है।

'युवा सुवासाः परिवीत आगात्'

आचार्य ब्रह्मचारी को उपदेश देता हैः-

1. **सत्यं वद**—हमेशा सत्य बोलना चाहिये। क्योंकि '**सत्यमेव जयते**'।

2. **धर्म चर**—धर्म का आचरण करना चाहिये। '**धारणात् धर्ममित्याहुः**। जिन नियमों से समाज टिका

हुआ है वह 'धर्म' है।

3. स्वाध्यायान्मा प्रमद—स्वाध्याय के दो अर्थ हैं एक उत्तम ग्रन्थों का अध्ययन जिस से भौतिक, मानसिक तथा आत्मिक उन्नति हो। दूसरा '**स्व**' अर्थात् अपने आप का अध्ययन।

4. आचार्याय प्रियं धनं आहृत्य प्रजा तंतु मा व्यवच्छेत्सी—अर्थात!:- आचार्य को जो धन प्रिय है वह लाकर उसे देना अर्थात् आचार्य की शिष्यों की जो प्रजा है उस का तंतु-सिलसिला-तोड़ना नहीं-आचार्य का प्रिय धन रुपया नहीं, आचार्य का धन उसके शिष्य है इसी प्रकार तेरे अन्य कुटुम्बी, तेरे पुत्र-पौत्र भी आचार्य के पास विद्याध्ययन के लिये आते रहें।

5. सत्यान्न प्रमदितव्यम्—**धार्मन्न प्रमदितव्यम्। अर्थात्**:- सत्य और धर्म के लिये प्रमाद मत करना। आध्यात्मिक (सत्य और धर्म)।

6. कुशलान्न प्रमदितव्यम्—**भूत्यै न प्रमदित-व्यम्** आधिभौतिक (कुशल और भूति)।

भौतिक तथा सांसारिक—उन्नति की तरफ ध्यान देना। मनुष्य का विकास दोनों आध्यात्मिक तथा अधिभौतिक एक जैसा होना चाहिये।

7. स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्–स्वाध्याय तथा प्रवचन से कभी भी दूर नहीं रहना चाहिये स्वाध्याय से जो कुछ आप प्राप्त करोगे उस का प्रवचन अवश्य करना चाहिये इससे ज्ञान बढेगा जब हम ज्ञान की बात दूसरे को समझाते है तब पहले उस का तार-तार अपने को समझना पड़ता है।

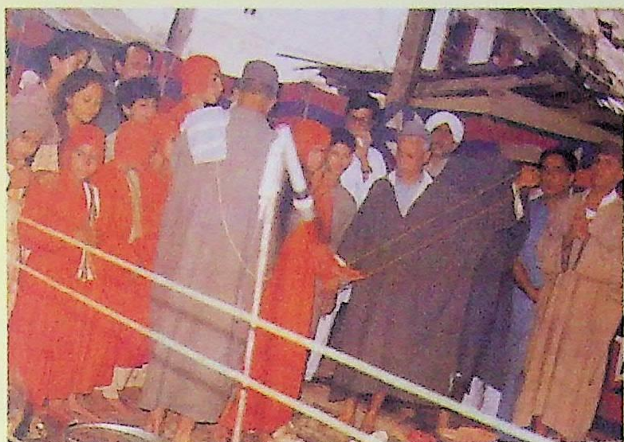
8. देव पितृ कार्याभ्याम् न प्रमदितव्यम्–अपने से जो ज्ञान में बड़े हैं '**देव**' कहलाते है, जो आयु में बड़े हैं वे '**पितर**' कहलाते हैं। ज्ञान में जो आप से बड़े हैं उन के कहे को मत टालो, इसी प्रकार आयु में बड़े हैं उनकी बात नहीं टालनी चाहिये। ज्ञान तथा आय में जो भी बड़ा है उस की बात ध्यान से सुननी चाहिये।

9. मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव–अर्थात् माता, पिता, आचार्य तथा अतिथि को देवता मान कर सत्कार करना चाहिये। यदि आप इन सब को देवता समान मानोगे तो तुम्हारी सन्तान भी तुम्हें देवता समान ही मानेगी गृहस्थ धर्म का यह सिलसिला वैदिक-संस्कृति का अभिन्न अंग है।

10. यानि अनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितानि

gurūjī

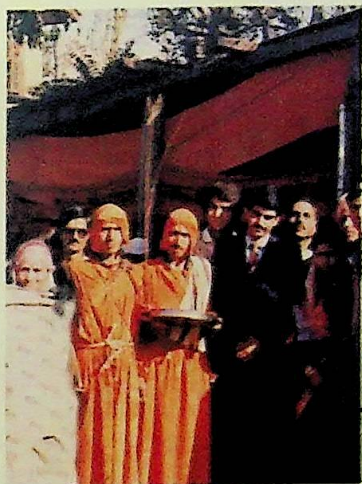
गुरूजी ब्रह्मचारियों
को यज्ञोपवीत
धारण कराते हुए।





ब्रह्मचारी अपनी मासी
से भिक्षा
(अभीद) मांगते हुए।

ब्रह्मचारी भिक्षा मांगते हुए
अपने सम्बन्धियों के साथ।



नो इतराणि—अर्थात्ः-जो मानने योग्य बात हो उसी को मानना, या जो आचरण अनुकरणीय हो उसी का अनुकरण करना।

11. **श्रद्धया देयम् अश्रद्धया देयम्**—अर्थात्ः-जिस काम में श्रद्धा है उस में यथाशक्ति दान देना, श्रद्धा ना भी हो तो भी दान देना क्योंकि हो सकता है जिस पर आप को श्रद्धा न हो वह भी महान् हो। इस कारण अश्रद्धा से भी देना चाहिए।

जब ब्रह्मचार्य गुरुकुल से घर वापिस जाता था तो गुरु इसी प्रकार का उपदेश उस को देता था।

यज्ञोपवीत की बनावट

विद्यार्थी जब गुरुकुल में जाता था वहां पर उस के दैनिक कार्यक्रम में सूत कातना भी था, सूत कातते समय ब्रह्मचारी 'ॐ' शब्द का उच्चारण करता था 'ॐ' ब्रह्म को भी कहते हैं। इसलिये यज्ञोपवीत को **'ब्रह्मसूत्र'** भी कहते हैं। यज्ञोपवीत की लम्बाई 96 चप्पे होती है अर्थात् एक मनुष्य की चार अंगुलियों की चौड़ाई 96 गुणी होती है। यज्ञोपवीत के तीन सूत्र, नौतार और एक ब्रह्मगाण्ठ होता है।

तैतरीय संहिता के अनुसारः- तीन सूत्र तीन ऋणों ऋषि ऋण, देव ऋण तथा पितृ ऋण, तीन

गुणों सत्त्व, रज तथा तमः **तीनों वेदों** ऋक् यजु तथा साम **तीनों लोकों** भः भुवः स्वः तीनों गुरुओं माता, पिता, तथा आचार्य का बोध कराते हैं।

सामवेदीय छान्दोग्य सूत्र में लिखा है। ब्रह्मा जी ने तीन वेदों से तीन लडों का सूत्र बनाया, विष्णु ने ज्ञान, कर्म तथा उपासना से तीनों लडों को तिगुना किया और शिवजी ने गायत्री की उपासना करके उस में ब्रह्म गाण्ठ लगा दी, इस प्रकार यज्ञोपवीत तैयार हुआ।

यज्ञोपवीत के नौ सूत्रों में नौ देवता वास करते हैं।

1. ओंकार = ब्रह्म
2. अग्नि = तेज
3. अन्नत = धैर्य
4. चन्द्र = शीतल प्रकाश
5. पितृ गण = स्नेह
6. प्रजापति = प्रजापाल
7. वायु = स्वच्छता
8. सूर्य = प्रताप
9. सब देवता = सम दर्शन

अर्थात्:- यज्ञोपवीत धारण करने वाले को नौ गुणः- ब्रह्म, (प्रणव, सत्य तत्त्व) परायणता, तेजस्विता, धैर्य, नम्रता, दया, परोपकार, स्वच्छता तथा शक्ति सम्पन्नता को अपनाने के लिये प्रयत्नशील रहना चाहिये।

गायत्री मन्त्र में 24 अक्षर हैः-

1. तत् = सफलता
2. स = पराक्रम
3. वि = पालन
4. तुर् = कल्याण
5. व = योग
6. रे = प्रेम

7. णि = धन	16. हि = तप
8. यम् = तेज	17. धि = दूरदर्शिता
9. भर् = रक्षा	18. यो = जागृति
10. गो = बुद्धि	19. यो = उत्पादन
11. दे = दमन	20. नः = सरसता
12. व = निष्ठा	21. प्र = आदर्श
13. स्य = धारण	22. चो = साहस
14. धी = प्राण	23. द = विवेक
15. म = संयम	24. यात् = सेवा

गायत्री उपरोक्त 24 शक्तियों को साधक में जागृत करती है। यह ऋण इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि इन के जागरण के साथ-साथ अनेक प्रकार की सिद्धियाँ एवं सफलतायें प्राप्त होती हैं तथा जीवन सम्पन्न हो जाता है।

गायत्री मन्त्र 24 अक्षर का है और वेद 4 है इस प्रकार चारों वेदो के गायत्री मन्त्रों के गुणन फल 24 x 4 = 96 आते है।

सामवेदी = छान्दोग्य सूत्र के अनुसार

तिथि = 15 + वार 7 नक्षत्र = 27 + तत्व 25 + वेद 4 + गुण 3 + काल 3 + मास = 12 = 96

पुराणों में लिखा है कि सुर-लोक में देवताओं के पास कामधेनु गौ है, वह अमृतोपम दूध देती है जिसे

पीकर देवता लोग सदा सन्तुष्ट, प्रसन्न तथा सुसम्पन्न रहते थे। इस में एक विशेषता यह है जो भी कोई अपनी मनोकामना लेकर इस के पास जाता है उस की इच्छा पूर्ण होती है। गायत्री भी एक कामधेनु की तरह है जो कोई भी गायत्री माता की स्तुति करता है उस की सभी मनोकामनायें पूर्ण होती है। यज्ञोपवीत संस्कार के समय बच्चे को हम विद्यारम्भ संस्कार भी करते है परन्तु यह संस्कारों की शृंखला में नहीं है।

गायत्री महिमा

गायत्री के विषय में वेद, शास्त्र, पुराण सभी एक मत होकर इसका गुणगान करते हैं।

अथर्ववेद में गायत्री की स्तुति वेद भगवान् ने इस प्रकार की है:-

स्तुता मया वरदा वेदमाता
प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणं प्रजा पशुं
कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्।।

अर्थात्:- मेरे द्वारा स्तुति की गई, द्विजों को पवित्र करने वाली वेद माता गायत्री आयु, प्राण, शक्ति, पशु, कीर्ति, धन, ब्रह्मतेज, उन्हें प्रदान करें।

भगवान व्यास ने कहा हैं:-

यथा मधु च पुण्येभ्यो छृतं दुग्धाद्रसात्पयः।
एवं हि सर्ववेदानां गायत्री सारमुच्यते।।

अर्थात्:-जिस प्रकार पुण्यों का सारभूत मधु, दूध का घृत, रसों का सारभूत दूध है उसी प्रकार गायत्री मन्त्र समस्त वेदों का सार है।

विश्वामित्र ने कहा है:-

तदित्यृचः समो नास्ति मन्त्रो वेदाचतुष्टये।
सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च दानानि च तपांसि च।
समानि कलया प्राहुर्मुनयो नतदित्यृचः।।

अर्थात्:- गायत्री मन्त्र के समान मन्त्र चारों वेदो में नहीं है सम्पूर्ण वेद, यज्ञ, दान, तप गायत्री मन्त्र की एक कला के समान भी नहीं है ऐसा मुनि लोग कहते है।

उपनिषदों में लिखा है:-

"गायत्री चन्दसां मातेति"

अर्थात्:-गायत्री वेदों की माता अर्थात् आदि कारण है।

शास्त्रों में लिखा है:-

गायत्री वेद जननी गायत्री चाप नाशनी
गायत्र्यास्तु परन्नास्ति दिविचेह च पावनम्।

अर्थात्:-गायत्री वेदों की जननी है, गायत्री पापों को नाश करने वाली है, गायत्री से अन्य कोई पवित्र करने वाला मन्त्र स्वर्ग और पृथ्वी पर नहीं है।

मनु स्मृति में लिखा है:-

एकाक्षरं परं ब्रह्म प्राणायामाः परन्तपाः।
सावित्र्यास्तु परन्नास्ति पावनं परमं स्मृतम्।।

अर्थात्:-एकाक्षर '**ओ३म्**' पर ब्रह्म है, प्राणायाम परम तप है और गायत्री मन्त्र से बढ कर पवित्र करने वाला कोई मन्त्र नहीं है।

शंख स्मृति में लिखा है:-

गायत्र्या परमं नास्ति दिवि चेहन पावनम्
हस्तत्राण प्रदादेवी पततां नरकार्णवे

अर्थात्:- नरक रूपी समुद्र में गिरते हुये को हाथ पकड़ कर बचाने वाली, गायत्री के समान पवित्र करने वाली वस्तु या मन्त्र पृथ्वी पर तथा स्वर्ग में भी नही है।

गायत्री तन्त्र:-

मननात् पापस्त्राति मननात् स्वर्ग मश्नुते।
मननात् मोक्षमाप्नोति चर्तृवर्गे मयो भवेत्।।

अर्थात्:-गायत्री का मनन करने से पाप छूटते हैं स्वर्ग प्राप्त होता है और मुक्ति मिलती है तथा चर्तुवर्ग (धर्म, अर्थ, कान, मोक्ष) सिद्ध होते है।

शंख स्मृतिः-

सावित्री जापतो नित्यः स्वर्गमाप्नोति मानवः।
तस्मात् सर्व प्रयत्नेन स्नानः प्रयतमानसः।
गायत्रीं त जपेद् भक्त्या सर्व पाप प्रणाशिनीम्।।

अर्थात्:-गायत्री मन्त्र जानने वाला मनुष्य स्वर्ग को प्राप्त करता है। इसी कारण स्नान कर समस्त प्रयत्नो से स्थिर चित्त हो सारे पापों का नाश करने वाली गायत्री का जप करें।

गायत्री जाप के लाभः-

सर्वेषां वेदानां गुह्योपनिषत्सार भूतां ततो
गायत्री जपेत्।

अर्थात्:-गायत्री समस्त वेदों का और गुह्य उपनिषदों का सार है इसलिये गायत्री मन्त्र का नित्य जाप करें।

गायत्रीं जपते यस्तु त्रिकालं ब्राह्मणः सदा।
अर्थो प्रति ग्रही वापि सगचेऽत्परमो गातिम्।।

अर्थात्:-जो ब्राह्मण गायत्री को त्रिकाल में जपता है वह मांगने वाला या दान देने वाला ही क्यों न हो वह भी परम गति को प्राप्त हो जाता है।

गायत्री मन्त्र का महत्व

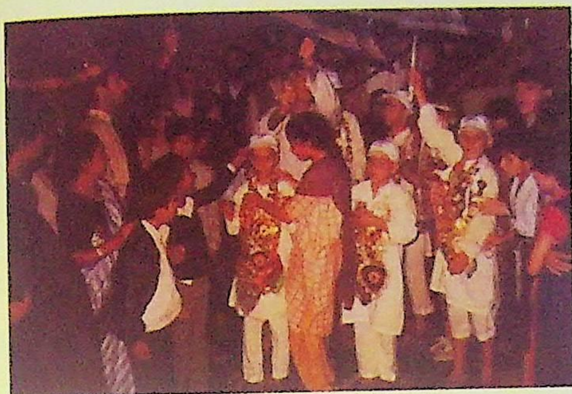
गायत्री की महिमा सभी वेदों तथा पुराणशास्त्रों में सविस्तार दर्ज है—अथर्व-वेद में स्वयं वेद्भगवान, का कहना है—

"स्तुता मया वरदा वेदमाता
प्रचोदयन्त्तां पावमानी द्विजानाम्
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं
द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्"।

अर्थः—मेरे द्वारा स्तुति की गई द्विजों को पवित्र करने वाली वेदमाता गायत्री आयु, प्राण, सन्तति, पशु कीर्ति, धन एवं ब्रह्मतेज देने वाली है।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्-सवितुर् वरेण्यं,
भर्गो-देवस्य धीमहि, धियो यो-नः प्रचोदयात्।

अर्थः— मैं उस शक्ति का चिन्तन करता हूँ जो

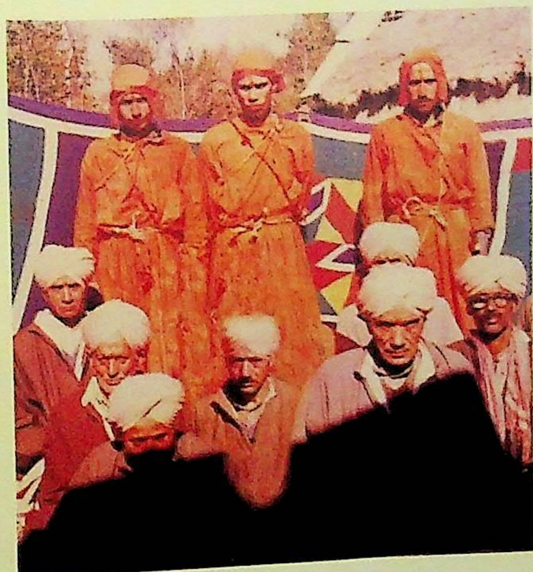


यज्ञोपवीत की पूर्णाहुति
के पश्चात् ब्रह्मचारी
मन्दिर जाते हुये





एक ब्रह्मचारी जिस का
यज्ञोपवीत संस्कार हो रहा है



काश्मीर के दक्षिण
प्रान्त के महान् विद्वानों
का दल ब्रह्मचारियों
के साथ ।

शक्ति ॐ ब्रह्मरूप हैं, **भूर्भुवः स्वः** जो शक्ति तीनों लोकों में व्याप्त है, **तत्**-जिस का वेदों ने तत् नाम से पुकारा है **सविता**-जो शक्ति इस सृष्टि को बनाती है, पालन करती है, नाश करती है, "**वरेण्यम्**" जो वरण करने के योग्य है, **भर्गः**- जो तेजो रूप है, **देवः** जो द्योतनशील है, अथवा ऐश्वर्य वाली है ऐसी उस महान् शक्ति का **धीमहि**—चिन्तन करता हूँ, वह शक्ति **धियः** मेरी बुद्धि को, **प्रचोदयात्**-सत् कर्मों में प्रेरित करे।

गायत्री मन्त्र का महत्त्व क्यों? शब्द नित्य है (शब्द ब्रह्म) वर्तमान विज्ञान भी यही मानता है, आज जो बातें हम करते हैं, अथवा हमारे मन की लहरें आकाश में अथवा सृष्टि के अन्तराल में किसी न किसी रूप में विद्यमान रहती है, सृष्टि के आरम्भ से ही ऋषि, मुनि और साधक गायत्री मन्त्र के अनुष्ठान करते आये हैं, उन ऋषियों, मुनियों एवं साधकों की साधनायें, भावनायें, तपश्चर्यायें इस छोटे से गायत्री मन्त्र के पीछे तेजोपुंज के रूप में एकत्रित हैं, जो व्यक्ति इस गायत्री मन्त्र का उच्चारण अथवा जप करता है उस साधक की सफलता में वह तेजोपुंज अवश्य सहायक बनता है, साधक ज्यों ही इस मन्त्रराज का जप अथवा उच्चारण

करने लगता है तो उसी क्षण मंत्र के प्रभाव का अनुभव करने लगता है, यही है इस गायत्री मन्त्र के महत्त्व का रहस्य।

गायत्री जप विधि:

शुद्ध आसन पर पद्मासन में पूर्व की ओर मुख कर के पानी का एक लोटा और एक थाली तर्पण के लिये रख कर नमस्कार करते हुए पढ़े (यदि नदी के तट पर करना हो तो थाली की आवश्यकता नहीं):-

प्रणवस्य ऋषि ब्र्ह्मा गायत्रं छन्द एवच देवोग्नि-व्यार्हृतिषु च विनियोगः प्रकीर्तितः प्रजापते-व्यार्हृतयः पूर्वस्य परमेष्ठिनः व्यस्ताश्चैव समस्ताश्च ब्राह्मम्-अक्षरम्-ओम्-इति व्याहृतीनां समस्तानां दैवतं तु प्रजापतिः व्यस्तानाम्- अयम्-अग्निश्च वायुः सूर्यश्च-देवताः छन्दश्च व्याहृतीनाम्-एकाक्षराणाम्-उक्ताख्यम्-द्व्यक्षराणाम्-अत्युक-ताख्यम् विश्वामित्रा- ऋषि-श्छन्दो, गायत्रं सविता तथा, देवतो-पनये जप्ये गायत्र्यै योग उच्यते आवाहयामि गायत्रीं सर्व-पाप- प्रणाशि-नीम् न गायत्र्याः परं जप्यं, नव्याहृति-समं हुतम

आगच्छ वरदे देवि, जप्ये मे सन्निधौ भव। गायन्तं त्रायसे यस्मात्-गायत्री त्वं ततःस्मृता अग्नि-र्वायुश्च सूर्यश्च बृहस्पत्याप- एव-च, इन्द्रश्च-विश्वे-देवाश्च देवताः सम्-उदाहृताः एवम्- आर्षं-छन्दो दैवतं विनियोग चानुस्मृत्य गायत्र्या शिखाम्-अवद्ध्य गायत्र्यैव समन्ततः आत्मनश्चापः वरिक्षिप्य, प्राणयामं कुर्यात् ओजोसीति गायत्रीम्-आवह्य देवानाम्- आर्षम् (अपने आप को पानी छिड़के अंजलि धारण करते हुये पढ़े):-ओजोसी सहोसि बलम्-असि भ्राजोसि देवानां धाम नामासि, विश्वम्-असि-विश्वायुः सर्वम्-असि- सवायुः, अभि-भूः-अंगन्यास-कीजिये दोनों हाथों की ऊंगलियों से स्पर्श करते हुये पढ़ेः "अ" नाभौ (नाभिको) "उ" हृदि (हृदय को) "म" शिरसि (सिरको)।। ॐ "भू"-अंगुष्ठाभ्यां नमः (दोनों अंगूठों को) भुवः तर्जनीभ्यां नमः (अंगूठे के साथ वाली ऊँगलियों को), "स्वः" मध्यमाभ्यां नमः (बीच वाली ऊँगलियों को) "महः" अनामिकाभ्यां नमः, (सब से छोटी की साथ वाली ऊँगलि को "जनः" कनिष्ठकाभ्यां नमः (छोटी ऊँगलियों को "तपः सत्य"

करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथ के तलवों को आपस में स्पर्श करें। "भू" पादयोः (पावों को) "भुवः" जान्वोः (गुठनों को) "स्वः" गुह्ये ("गुह्यस्थान को) "महः नाभौ" (नाभि को) "जनः" हृदि (हृदय को) "तपः" कण्ठे (गले को) "सत्यं" शिरसि (सिर को), ॐ "भूः" हृदयाय नमः "भुवः" शिरसि स्वाहा, "स्वः" शिखायै वौषट (चोटी को) महः कवचाय हूँ, (वस्त्रों को) जनः नेत्राभ्यां वौषट् (नेत्रों को) "तपः" सत्यम्-अस्त्राय "फट्" चुटकी मारे।। "तत्-सवितुर्" अंगुष्ठाभ्यां नमः, "वरेण्यं" तर्जनीभ्यां नमः, "भर्गो-देवस्य मध्यमाभ्यां नमः", धीमहि" अनामिकाभ्यां नमः, "धियो योनः" कनिष्ठकाभ्यां नमः, "प्रचोदयात्" करतल करपृष्ठाभ्यां नमः तत् "पादयोः सवितुर्" जान्वोः (गुठनों का) "वरेण्यं" कट्यां कमर को, भर्गो नाभौ "देवस्य" हृदये "धीमहि" कण्ठे "धियोः" नासिकायां "यो" चक्षुषोः (नेत्रों को) "नः ललाटे" (माथे को) "प्रचोदयात्" शिरसि। "तत् सवितुर्" हृदयाय नमः, "वरेण्यं" शिर-से स्वाहा, "भर्गो

देवः" शिखायै वौषट् 'धीमहि' कवचाय हूँ (वस्त्रों को धियो योनः "नेत्राभ्यां वौषट् "प्रचोदयात् अस्त्राय फट्" (चुटकी मारिये) "आपः" स्तनयोः (स्तनों को) "ज्योतिः" नेत्रयोः, "रसो" मुखे "अमृतं" ललाटे "ब्रह्म-भूभुर्वः स्वरों (शिरसि) प्राणायाम करके तर्पण कीजियेः-

ॐ अस्य गायत्री शापविमोचन-मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषि गायत्री छन्दः वरुणो देवता ब्रह्माशाप-विमोचने विनियोगः।

शाप विमोचन

ओ३म्-यत्-ब्रह्मेति ब्रह्मविदो विदुः-त्वां पश्यन्ति धीराः।
सुमनसो-वा गायत्री त्वं ब्रह्मशापात्-विमुक्ता भव ।।1।।
ओ३म्-अर्क-ज्योतिर् अहं ब्रह्मा ब्रह्म ज्योतिर्-अहं शिवः।
शिव-ज्योतिर्ः अहं विष्णुः शिव-ज्योतिः शिवः परम् ।।2।।
गायत्री त्वं वशिष्ठ शापात्-विमुक्ता भव।
ॐ अहो देवि महादेवि दिव्ये सन्ध्ये सरस्वति।
अजरे अमरे चैव ब्रह्मयोनि नमोस्तुते।
गायत्री त्वं विश्वामित्रा-शपात्-विमुक्ता भव ।।3।।

गायत्री का ध्यान करते हुये पढ़े :-

मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील-धवल, छायै-र्मुखैः-त्रीक्षणैः
युक्ताम्-इन्दु-निबद्ध-रत्न-मुकटां, तत्त्वात्म-वर्णात्मिकाम्
गायत्रीं वरदा-भया-ङ्कुश-करां शूलं कपालं गुणं
शंखं चक्रम्-अथार-बिन्दु-युगलं हस्तै-र्वहन्तीं भजे ।।1।।

आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनि।
गायत्री छन्दसां-मात-ब्रह्म-योने नमोस्तुते ।।2।।

यह मन्त्र तीन बार पढ़ कर गायत्री मन्त्र का जप करें।

"ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्-वरेण्यं
भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ

यदि माला से जप करना है तो जप समाप्त करके माला सिर पर रख कर प्रणायाम करके तर्पण करते हुये पढ़ेः- **देवा-गातु-श्रोत्रियाः देवा गातुविदो, गातुं वित्वा-गातु-मित मनसस्-पत-इमं देवयज्ञं स्वाहा, वाचे स्वाहा वातेघाः नमोः धर्मनिधनाय नमः सुकृत-साक्षिणे। नमः प्रत्यक्षदेवाय भास्कराय नमो नमः।**

जप करने का स्थान घर के उस कमरे में जप करें जहां आप की एकाग्रता में किसी प्रकार का विघ्न न पड़े, नदी के तट चर करना अधिक लाभदायक

रहता है।

क्या महिलाओं को गायत्री साधना जप अनुष्ठान आदि करने का अधिकार है?

वेदों शास्त्रों पुराणों के स्वाध्याय से यह स्पष्ट होता है कि पुरुष हो या स्त्री उपासना के अधिकारी हैं, प्राचीनकाल में गार्गी, मैत्रेयी देवयानी, लोपामुद्रा आदि महिलाओं ने गायत्री शक्ति की उपासना से ही आत्मा को समुन्नत बनाया था सावित्री ने एक वर्ष तक गायत्री मंत्र की साधना की थी जिस साधना से ही वह अपने पति को यमराज से लौटा सकी। स्त्री और पुरुष दोनों ही गायत्री माता की सन्तान है, स्त्री सधवा हो या विधवा अपने जीवन को सफल बनाने के लिये गायत्री मन्त्र का जप किया करें।

कन्याओं को भी यज्ञोपवीत संस्कार का अधिकार है (धर्मशास्त्र)

शास्त्रों में दर्ज है वैदिक संस्कृति में कन्याओं को यज्ञोपवीत ग्रहण करने का वैसा ही अधिकार है जैसा बालकों को, वैदिक काल में स्त्रियाँ वेद-शास्त्र पढ़ा करती थी। गोभिलीय गृह्य सूत्र में लिखा है:-

प्रावृतां यज्ञोपवीतिनीम अभ्युदानयन् जपेत्
सोमोऽददत् गन्धर्वाय इति

अर्थात्:- कन्या को कपड़ा पहने हुये, यज्ञोपवीत धारण किये हुये पति के निकट लायें तथा यह मन्त्र पढ़ें। इस मन्त्र से स्पष्ट है कि कन्या यज्ञोपवीत किये हुये हो। यह श्लोक भी इसकी पुष्टि करता है।

पुराकल्पे हि नारीणां मौञ्जीबन्धन मिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्री वाचनं तथा।।

अर्थात्:-प्राचीन काल में स्त्रियों का मौञ्जीबन्धन-संस्कार होता था, वे वेदादि शास्त्रों का अध्ययन भी करती थी। हारीत संहिता तथा पराशर संहिता में कहा है।

"द्विविधा स्त्रिया ब्रह्मावादिन्यः, सद्योवध्वश्च।
तत्र ब्रह्मवादिनीनाम् उपनयनम्, अग्निबन्धनम्, वेदाध्ययनम् स्व-गृहे भिक्षा इति, वधूनाम तु उपस्थिते विवाह कथंचित उपनयनं कृत्वा विवाहः कार्यः"।

अर्थात्:- दो प्रकार की स्त्रियां होती हैं एक 'ब्रह्मवादिनी' जिन का उपनयन होता है, जो अग्निहोत्र करती है, वेदाध्ययन करती है अपने परिवार में ही भिक्षावृति से रहती हैं और दूसरी वें जिन का उपनयन

संस्कार करके विवाह होता है। इसकी पुष्टि 'निर्णय सिन्धुकार' ने भी अपनी पुस्तक के पृष्ट 414 पर की है।

वेद मन्त्रों के अर्थों को स्पष्ट करने वालों को 'ऋषि' कहा जाता है **"ऋषयो मन्त्र द्रष्टारः"** कई वेद मन्त्रों के अर्थ खोलने वाली 'ऋषिकायें' भी हुई है ऋग्वेद में इस प्रकार की लगभग 30 ऋषिकाओं के नाम आते हैं जैसे गार्गी, मैत्रेयी, मदालसा, अनुसूय्या, देवयानी, अहिल्या, कुन्ती, द्रौपदी इत्यादि गायत्री की उपासक रही हैं।

इसके अतिरिक्त मनु महाराज प्रत्येक धर्म कार्य में स्त्री-पुरुष का समान अधिकार मानते है। मनु ने घर में अग्निहोत्र आदि धर्मकार्यों के आयोजन की मुख्य ज़िम्मेदारी स्त्री को ही सौंपी है और यह आदेश दिया है कि पुरुष को प्रत्येक धर्म कार्य स्त्री को साथ लेकर करना चाहिये जैसे **"शोचे धर्म अन्नपक्त्यां" अर्थात्** घर की शुद्धि, धर्मकार्यों का आयोजन और भोजन बनाना आदि स्त्री को सौंपा है। मनु ने संस्कारों को सभी के लिये समान रूप दिया है, वहाँ पर स्त्री-पुरुष का कोई भेद नहीं है। सभी संस्कार मन्त्रपूवर्ती करने चाहिये—वह स्त्री का हो या पुरुष का। संस्कार ब्रह्मण वर्ग के लिये ज़रूरी है चाहे वह स्त्री हो अथवा पुरुष। काश्मीरी पण्डित लौगाक्ष के 24 संस्कारों को ही मानते

हैं। हम लड़की के केवल 9 संस्कार करते है और लड़के के 24 संस्कार। मनु स्मृति में लिखा है '**जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्चते**' अर्थात् संस्कार करने पर ही हम अपने आप को ब्रह्मण कहला सकते हैं। शास्त्रों में लिखा है कि लड़की माता-पिता का क्रिया कर्म कर सकती है तथा लड़की अपने माता-पिता का दाह संस्कार भी कर सकती है परन्तु धर्म शास्त्र में यह भी लिखा है कि यज्ञोपवीत के बिना हम कोई भी धार्मिक कार्य अथवा क्रिया कर्म नहीं कर सकते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में कन्याओं का यज्ञोपवीत संस्कार होता था। यह बात भी है कि जब हम अपने लड़के का विवाह करते हैं तो लग्न के समय लड़के को छः धागों वाला यज्ञोपवीत पहनाते हैं और गुरु लड़के से कहता है कि पहले आप को तीन धागों वाला यज्ञोपवीत था अब छः धागों वाला यज्ञोपवीत है इसमें से तीन धागे आप को अपनी स्त्री के हैं अर्थात् आप को आज से अपनी स्त्री के धार्मिक कार्यों का चार्ज भी लेना है क्योंकि उसको गृहस्थ का पूरा कार्य है तथा बच्चों की देखभाल करनी है। इस से स्पष्ट होता है कि लड़की का भी यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार था परन्तु समय बीतने के साथ-साथ यह संस्कार केवल लड़कों तक ही सीमित रहा है जैसे

कर्ण वेध का संस्कार पहले-पहले दोनों लड़कों तथा लड़कियों को करते थे परन्तु समय बीत जाने के साथ-साथ यह संस्कार केवल लड़कियों तक ही सीमित रहा। आप किसी वृद्ध माता जी से भी पूछें कि पहले पहल स्त्रियां भी लंगोट तथा 'आटीपन' लगाती थी, 'आटीपन' को मेखला कहते हैं जो कि यज्ञोपवीत संस्कार पर ही कमर में बांधी जाती है इससे भी स्पष्ट होता है कि पहले पहल लड़कियों को भी यज्ञोपवीत संस्कार किया जाता था।

यज्ञोपवीत कब?

कश्मीरी पण्डित यज्ञोपवीत को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संस्कार मानते आये हैं कश्मीरी पण्डितों के लिए गायत्री मन्त्र सामूहिक गुरुमन्त्र है। यह संस्कार काश्मीरी पण्ड़तों की संस्कृति का अंग बन चुका है। धर्म शास्त्र की आज्ञा है यह संस्कार ब्राह्मण को 7वें वर्ष से 16 वर्ष तक करना चाहिये, प्राचीनकाल में यह संस्कार गुरुकुल में किया जाता था फिर तब से ब्रह्मचारी गुरुकुल में ही ठहरता था-चूँकि विद्यार्थी गुरुकुल में वेदों का पठन पाठन शास्त्र विद्या तथा शस्त्र विद्या यहां तक कि प्रत्येक प्रकार की विद्या को प्राप्त करता था तथा ब्रह्मचर्य का पालन 25 वर्ष तक करता था इसलिये उन विद्यार्थियों को ब्रह्मचारी कहते थे, जब ब्रह्मचारी गुरुकुल

से विद्या सम्पूर्ण करके घर वापस आता था उसको समावर्तन कहते थे। गर्भ से लेकर यज्ञोपवती तक के 9 संस्कार बालक को घर में ही किये जाते थे। यज्ञोपवीत से लेकर 16 संस्कार काश्मीरी पण्डित ब्रह्मचारी को गुरुकुल में ही करते थे जो सभी वेदों के पठन-पाठन से सम्बन्धित होते थे-"**वेद**" कहते हैं ज्ञान को, वह इंजीनियरी (अभियांत्रिकी) हो या साईंस अथवा डाक्टरी आदि। समय बदलता है तो समय के साथ मनुष्य को भी बदलने पर विवश होना पड़ता है। अब हम यज्ञोपवीत संस्कार गुरुकुल के बदले घर में ही करते हैं, केवल यज्ञोपवीत ही नहीं बल्कि गर्भ से लेकर समावर्तन तक के सभी 22 संस्कार एक ही दिन में यज्ञोपवीत के दिन ही करते हैं, मानिये अब यह संस्कार हम केवल अपनी प्राचीन संस्कृति को स्मारक रूप में जीवित रखने के लिये ही करते हैं।

आज के युग में गुरुकुलों का स्थान लिया है कॉलिजों और यूनिवर्सिटियों ने, वर्तमानकाल में जब तक एक विद्यार्थी वेदाभ्यास यानी इंजीनियरी, डाक्टरी व साईंस आदि कोई ट्रेनिंग कर रहा है वह विद्यार्थी तब तक ब्रह्मचारी ही कहलायेगा यदि दैवयोग से किसी कारण वश इस अवस्था तक विद्यार्थी का यज्ञोपवीत न किया हो अवश्य कीजिये।

।। इति शुभम्।।

विवाह संस्कार

विवाह संस्कार में सबसे पहले किसी अच्छे मुहूर्त पर लड़की अथवा लड़के की माँ अपनी माँ के घर निमन्त्रण पत्र (दपनि) देने के लिये जाती हैं। इस अवसर पर इस प्रकार का वनवुन किया जाता हैं।

दपनि–नेरुण

सीता मअली दपने द्रायिखय।
ज़नक राजुन घर चायखय।।
नून चोचि अतगत ह्योथ द्रायिखय।
दशरथ राज़न घर चायख्य।।
दपने द्रायिखय मालिनि पखिसय।
नखिसय अनिथय मोहरअ त लाल।।
दपने द्रायिखय पननसि पूरिस।
दपवअनि अनिथय टूरिस क्यथ।।
दपने द्रायिखय दछि डूरि मन्जिये।
अछदारि यजमन बसर्दय।।

इसके पश्चात् किसी अच्छे मुहूर्त पर लड़की अथवा लड़के को मेहन्दी लगाई जाती है, तथा लड़की के बाल संवारे जाते है जिसको 'घरनावय' कहते हैं इस समय स्त्रियां इस प्रकार का वनवुन करते हैं।

लिवुन

शोकलम करिथ हेमव वनवोनय।
त्रति फल दिति माजि भवानी।।
प्रज़ि पेठ अनितोन ब्रह्मुण छअरिथ।
लिवनस क्युत दियि सात चअरिथ।।
नवि नेशपतर रुत द्राव साथा।
जंगि हुन्द दाता श्री भगवान्।।
असि कअर म्येचि कअम रचि बुधवारे।
कमि हारि कअरनय गरनावय।।
असि कअर म्येचि कअम प्रिछिय गुरुहस।
ती आव परमीश्वरस खोश।।
गरनावनस जन्गि कुसुयि ओयिय
मंगला दीवी त नन्दकीश्वर।
दपने नेरनस जन्गि कुरु ओयिय।
मंगला दीवी त नन्दकीश्वर।।

मस मुचरावुन

ओं सेदि दाता वेग्न हरतारो
गणपत यारय मस मुचरय।।
शोकलम करिथ मस मुचरअयेय।
शुभफल दितीय माजि भवअनी।।
मस मुचरायेय खेशे-खेशे।
विश्वामित्रनि कूरियेय।।
मस मुचरनस ज़नि़ कुस ओयय।
मंगला दीवी त तन्दकीश्वर।
मस मुचरोयय रूमय-रूमय।
भुमय सीननि कूरियेये।।

मस पारुन

कंधन्या अग्निमय छानय वानय
मोक्त्तय दानय जरअसे।
सोन सअन्ज़ि कंघने जठ वालय
अठ पारय फलिल सअति।
कूरि पारयेय बादाम वंकय
आदन कूर गछि वअरिवुयि।।

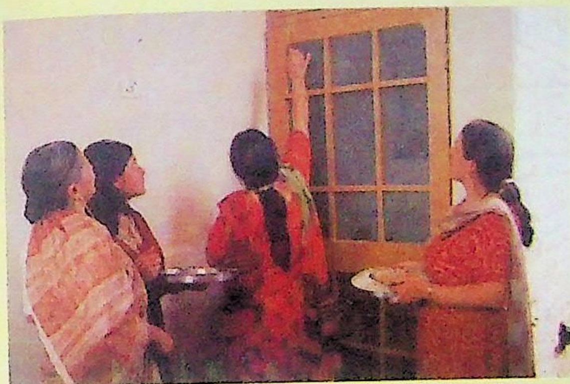
क्रूल ख्वारुन

अस्त-अस्त खचखय डढंख हंगस।
दस्त-दस्त वअजिथय जाय लछज़ि।।
पोण्य फिर टठजे लछ़िज डाल ह्यांरु।
यथ राज़ रंगस छु नमस्कार।।
वर करेयथय वरि सोन्दरिये।
करि सोन्दरिये कोरुमन क्रावे।।
वेर करेयथय देगि तय सोन्सन्दिय दानस।
सोन हयि लोव लाग बर हंगस

इसके पश्चात् हम मेहन्दी रात मनाते है मेहन्दी रात के लिये किसी मुहूर्त की जरूरत नहीं है। मेहन्दी रात पर इस प्रकार का वनवुन करते हैं।

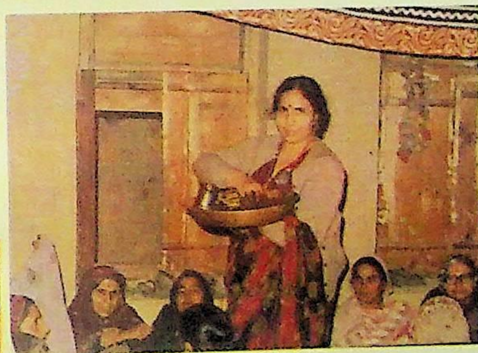
मँजिरात

दक्षिन किस बालस मँजि हुन्द तर द्राव
शर द्राव लालस छि मँज़ेरात।
पादशाह बागस तुलमुलि नागस।
त्रागस मंज फोल मँजे पोश।।



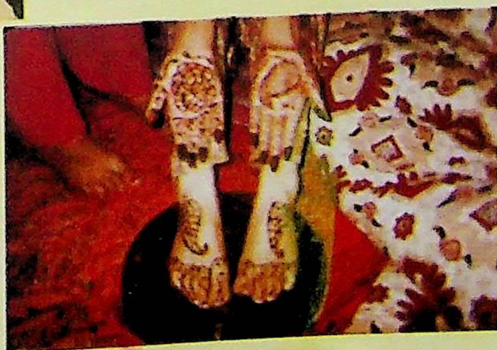
स्त्रियां अपने मकान के
दीवार पर 'क्रूल'
एक प्रकार की
पेंटिंग बनाती हुई

महन्दी रात पर अपने
मेहमानों को महन्दी
बटोरती हुई पोफ





मेहन्दी रात पर दुल्हन
के हाथों, पैरों पर
महन्दी लगाती हुई पोफ



असि वॅच् मँज़ तय खॅच् तापदानन।
शहि ज़ाफरानन छि मँजेरात।।
असि वँच मँज़ तय खँच् दरपरदन।
येति मरकरदन छि मँज़ेरात।।

बुथि छक सब्ज़ तय रंग वोज़जी।
कमि वान अनिमख मोल्लजी।।
दोहस फ्यूरहम यारय बलिये
शामन छलिये खोर-फलिये।

महाराज़ लालो पादशाह पसन्दो।
मअंजि़ मसनन्द हो प्रारान छुयि।।
यज़मन बाई शमादान जालतय।
मअंजि़ कोण्ड बालतय देवान खान।।

पार्वती आइ रथस खसिथ।
महाराज़स लागव अथस मअंज़।।
आखो विलि तय ज़ाखो वखतय।
मअंज़ लागय पादशाह तखतस पेठ।।

पोफ आसय मोछि मअंज लागान।
मासय आसय कोछि ललवान म।।

यिम् कम दुरि-भत्त वाजेनि आये
हिन्दोस्तान चि हेन्द बाये।।

उसके पश्चात 'दिवगौण' का संस्कार होता है इसके लिये भी किसी मुहूर्त की ज़रूरत नहीं है यह हम किसी भी समय कर सकते हैं। देवगौण संस्कारों की कतार में न होते हुये भी विवाह संस्कार में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है इस संस्कार में धार्मिक रीति के अनुसार पूजा होती है अग्नि जला कर पूजा की जाती है तथा लड़की के सोने के ज़ेवरात तथा बर्तन इत्यादि को अग्नि के सामने रख कर पूजा की जाती है फिर लड़की के ऊपर चार लड़कियां एक लाल वस्त्र को पकड़ती हैं तथा लड़की का पिता अथवा गुरु जी अर्घ्य का पानी इस पर डालता है तथा वेद मन्त्रों का उच्चारण करता है (अर्घ्य) पानी, दधू, विष्टर, घी, दही, चावल, जव और सर्षप के आठ द्रव्य अर्घ्य कहलाता है।

लड़की अथवा लड़के को एक लकड़ी की चौकी पर बिठाया जाता है लकड़ी की चौकी के नीचे गुरुजी चूने से अष्टदल बनाता है उस पर चौकी रखी जाती है। फिर यह बाथरूम में अच्छी प्रकार से नहा सकते है फिर लड़की को एक प्रकार की टोपी पहनाई जाती है

जिसको कलपुश कहते है यह आमतौर पर लाल रंग की ही होती है कलपुश तरंग का पहला हिस्सा है जिस को देवगौण पर प्रयोग किया जाता है।

जिस दिन बारात आती है उसी दिन लड़की को 'तरंग' पहनाया जाता है 'तरंग' एक प्रकार की पगड़ी जो केवल दुल्हन को पहनाई जाती है उस को बनाने वाला भी आज कोई नहीं मिलता है। तरंग में पहले कलपूश पहनायी जाती है फिर सफेद रंग के कपड़ें की डेढ़ इंच चौड़ा लट्ठा इस कलपूश के चारों ओर बान्दा जाता है उस के ऊपर तथा उसके ऊपर -जूज़' जो एक ख़ास कपड़े की बनी होती है कलपूश पर लगाई जाती है इसी प्रकार शीश लाठ एक प्रकार की सफेद शीट डेढ इंच चौड़ी इस लट्ठे पर पगड़ी पर बांधा जाता है। तरंग की क्रिया समाप्त होने पर लड़की को सजाया जाता है।

देव गौण पर मातृका पूजा होती है इस के लिये 7 टाकू रखे जाते है इनमें टीका, अखरोट, नारीवन, रोटी के टुकड़े, मुंग वरु रखा जाता है। इनको दिवत गूल्य कहते हैं। शां के समय सभी स्त्रियां इस यज्ञ का हुत शेष उठा कर दरिया में डालने के लिये जाती है रास्ते में इस प्रकार का वनवुन करती हैः-

देवगोण

शोकलम करिथ वनवुन ह्योतुयि
शोभ फल दितुय माजि भवानी।
जमनायि ज़लय गंगय म्येचे।
दिवगोनस क्युत लिवसे।।
आकाशि व अछखय अम्बरावतिये।
श्री सरस्वतिये कानी लिव।।
पीरे तल प्येमेयि मरेद रअखीय।
हकय आयि भवानि जाफल हेथ।।
कूंजन चोरन कन्यकय चौरय।
मोल तय ग्वर छुयि गुड दिवान।।
कनि श्राण कोरयेय मे त पिलवाजे।
लोकचे माजे लोल बोरयेय।।
तनि मलोयेय गूह, कोश त ओटुय।
सच़ आव पश्मीन पोटुय हेथ।।
डेकस टेकिस कअंकनि बन्धस
मोजय वन्दुस चन्दन तन।।
पननिस बब सअन्ज़ि गज़ख तीरी।

पीरि पेठ करयेय कन्य संस्कार।।
थाल टूर ओनमय गोजे वोर
डेजहूर ओनमय वेंजिब्रारे।।
दअंतन यअति सुम कडयोय।
सम गण्डयोय नअरिवन सअति।।
हावसि प्रप्युन चोटुय थावुस
त्रावुस गौसअ तय बोजुस वेद।।
दिवगोन मोकलअविथ अथि फोल रटिव।
खेयिव मालि पादशाह बागचि दछय।।

दिवत गूल्य

दिवत गूल्य वटिथय वरि तय हन्दे
घरि वटिथ हरि चन्द्र राज़ने।।
नेमिथ वटिथय दिवतय गूलि
समिथ वसवय यारय बल।।
दिवतय गूल्यन सति सति शमाह।
ब्रोंठ ब्रोंठ बह्मा वीद परान।।

चोट त्राव कोलि तय लवदिये खोरन।
दौनल खॅचखय हुत शीश ह्यथ।।

तरँगअ गँडुन

मासव कोतुयि तोमस फोतुयि
पोफव कोतुयि कलाबोत।।
रथि वोथ तोस तय अथि व्यसनोवमय
तथि करनोवमय तरँगहन।
तरँग ओनमय गाह लोग त्रावने।
ताह कोरुस माजि, रअग्न्याये।।
तरंगस अन्निस सोन सअन्ज़ टेक्य
डेकय बअडये नीरीज़ेम।
तरंगस चअन्निस सोन कलाये।
दूर बलाये गअछिनय।।
जूजा अनिमय वोवुरि वानय
वोबुर योत आव पानय ह्यथ।।
जोजे चाने सोन जरनोवमय।
घरि वननोवमय अन्द वअंतिनय।।

कोरि लगनस

बुशक द्रायि हेलि तय दात्रि लोग पूरे
दूरियुक येनिवोल कर वाते।।
शेंख शब्द बूज़मय वेथ अपारे।
गोंद प्रजनोवमय वेजिब्रारे।।
समन्दरस सोथ दयुत चन्दन लते
शेव नाथ सून्दे वने आव।।
राज़पोत्र शूखान शूभिनय खोरन
गाह प्योव दोरन त दरवाज़न।
छतरस चअनिस मोक्तव ज़ोलुयि
इन्द्राजुन येन्यवोलुयि आव।।
घरि पननि वुछमख मोटरस खसान
होहवुरि वुछमख बोन वसान।।
कूरि कोमअरी माम जू डरिव छुयि।
नखि छुयि चोतुर भोज़ नारायण।।
योस बेनि रअछथन नखस त कोछे।
सोयि बेनि खअचयेय गंगय वेस।।

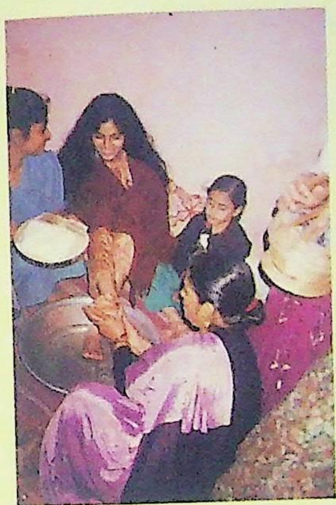
23वाँ संस्कार है इस को संस्कारों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है यह प्रत्येक व्यक्ति का एक अनिवार्य ध ार्मिक कर्तव्य है विवाह एक प्रकार का यज्ञ है जो मनुष्य गृहस्थ जीवन में प्रवेश नहीं करता है उस को अयज्ञीय अथवा यज्ञहीन कहा जाता है।

तैतिरीय ब्राह्मण में लिखा है:- **अपत्नी पुरुष अयज्ञीय अथवा यज्ञ हीन है—एकाकी पुरुष अधूरा है।** यज्ञोपवीत धारण करने से मनुष्य पर तीन ऋणों का बोझ होता है उन तीन ऋणों में '**पितृ ऋण**' भी है हम सन्तानोत्पति से ही उस ऋण से मुक्त होते है।

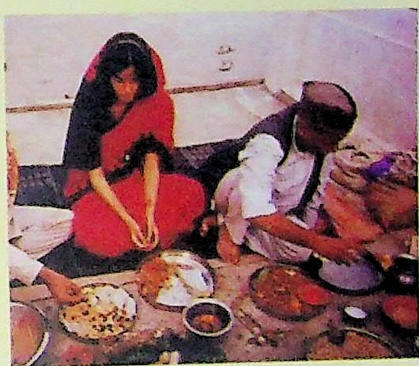
स्मृतियों में गृहस्थाश्रम की बहुत प्रशंसा की गई है, गृहस्थाश्रम श्रेष्ठतम आश्रम है क्योंकि सभी आश्रम गृहस्थाश्रम पर ही आधारित हैं। '**पत्तनात् त्रायति इति पत्नि**' चरित्र गिरने से जो बचाये वह पत्नी है पत्नी धर्म, अर्थ तथा काम की सिद्धि का श्रेष्ठतम साध ान है। कोई अपत्नीक पुरुष चाहे वह ब्रह्मण हो या क्षत्रीय, वैश्य हो या शूद्र धार्मिक क्रियाओं का अधिकारी नहीं हो सकता है।

लिखा भी है:-

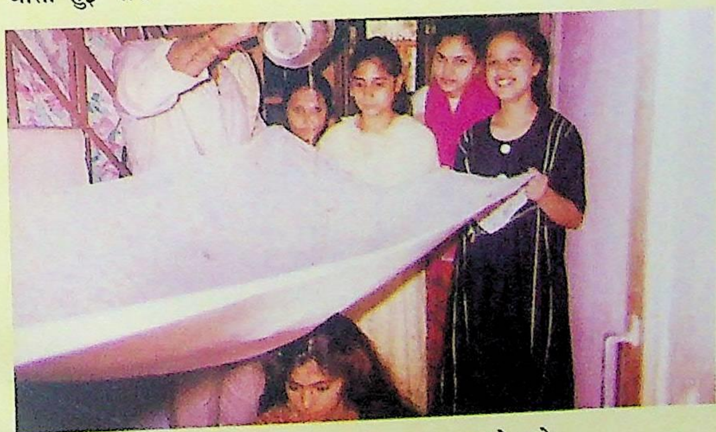
पत्नी धर्मार्थकामानां कारणं प्रवरं स्मृतम्।
अपत्नीको नरो भूप कर्म योग्यो न जायते।।



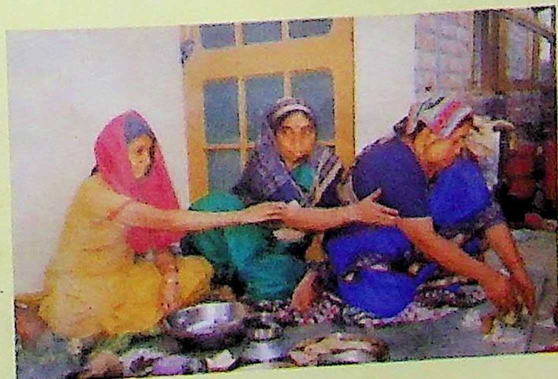
मेहन्दी रात पर लड़की
के पैर धोती हुई पोफ



लड़की का देवगौण संस्कार करते हुऐ



देवगौण पर कन्या शराण करते हुऐ



देवत्य गूल्य
रखती हुई स्त्रियां

ब्राह्मणः क्षेत्रियो वापि वैश्यः शूद्रोपिवा नरः।

विवाह एक सनातन तथा स्थायी सम्बन्ध है जो जीवन के विभिन्न परिवर्तनों तथा संकटों की भट्टी में पक कर और भी सुदृढ़ तथा स्थायी हो जाता है। अश्मारोहण की क्रिया में वर-वधू को एक दृढ़ पत्थर पर इन शब्दों के साथ आरूढ करता है।

"आरोहेम मश्मान मश्मेव त्वं स्थिरा भव"

इस दृढ़ पत्थर पर आरूढ हो और इसी के समान स्थिर हो। पत्थर स्थिरता व शाक्ति का प्रतीक है। इस प्रकार पत्नी को अपने पातिव्रत्य में दृढ़ तथा स्थिर होने के लिये कहा जाता है। विवाह मनुष्य के जीवन में सर्वाधिक क्रान्तिकारी घटना है यह मनुष्य के जीवन में एक नवीन अध्याय का सूत्रपात करता है। दो अनजान व्यक्तियों के बीच एक सर्वथा नवीन सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। विवाह एक '**धार्मिक- संस्कार**' Sacrament है यह टूट नहीं सकता। एक बार हो गया तो हो गया, इस को आजन्म निभाना होता है। विवाह के विषय में हमारे समाज में सनातन काल से यह ह धारणा चली आ रही है कि यह एक जन्म-जन्मान्तर का सम्बंध है इसे तो हर हालत में निभाना ही पड़ता है। (परन्तु आजकल हम देखते हैं कि विस्थापन के

पश्चात् हमारे समाज में कुछ ऐसे परिवर्तन आये हैं जो हमारे विनाश का कारण बन सकते है आजकल सैंकड़ों की संख्या में तलाक (Divorce) के मुकद्दमे अदालतों में चलते हैं। हमें इस चीज़ को रोकना होगा नहीं तो नई पीढ़ी हमें माफ नहीं करेगी।)

विवाह का सबसे पहला उद्देश्य धर्म का पालन करना है दूसरा उद्देश्य सन्तान की प्राप्ति तथा विषय भोग है इसके अतिरिक्त विवाह का मुख्य उद्देश्य पितृ ऋण चुकाना है।

विवाह आठ प्रकार के हैं जिनमें श्रेष्ठ विवाह ब्रह्म विवाह माना जाता है काश्मीरी पण्डित सारस्वत ब्राह्मण होने के कारण ब्रह्म विवाह विधि से ही विवाह करते हैं। विवाह एक धार्मिक संस्कार है। इस में संस्कार के तौर पर अनेक ऐसे विधि-विधान किये जाते हैं जिन से विवाह की धार्मिकता की नीव सुदृढ़ हो जाती है। इस संस्कार में सब से पहले वर **'व्यूग'** पर खड़ा होता है व्यूग जो कि अनेक प्रकार के रंगों से बनाया जाता है यह काश्मीर की पुरातन कला कृति का साक्षी है भारत वर्ष में यह प्रथा प्रचलित है इस को रंगोली कहते हैं यह सूर्य की आकृति जैसा बनाया जाता है तथा विवाह के समय सूर्य भगवान् को साक्षी रखा जाता है वर के व्यूग पर खड़ा होने के पश्चात् वधू को भी व्यूग पर लाया

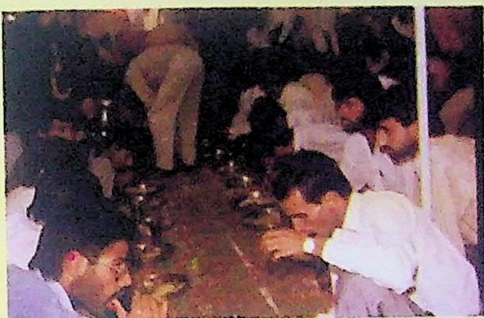
जाता है तत्पश्चात् वर का स्वागत फूल मालाओं, हारों से किया जाता है फिर घर की कोई वृध्द महिला इन दोनों की '**आलथ**' (चावल के आटे से बनाये गये दीपक जिनमें तेल बत्ती डालकर जलाया जाता है और एक थाली में रखकर शुभ फल हेतु उसे दुल्हा के सिर के ऊपर से गोलाकार मुद्रा में घुमाया जाता है उसे आलथ कहते हैं।) निकालती है तथा किसी थाली में आटे के द्वीप जला कर इन दोनों की आरती उतारी जाती है। तत्पश्चात् इन दोनों को एक दूसरे द्वारा खोया हुआ नबात खिलाया जाता है ताकि इनका प्रेम सम्बन्ध दृढ़ हो जाये। इस समय सभी स्त्रियां वनवुन (गाती) करती हैं। जैसेः-

1. **व्यूग छुयि लीखित सोमि सोमि जाये**
   शाये कृष्ण जूव ने।
2. **ओरय ओई साहिब दौलत।**
   योरय नेरुस आलथ ह्यथ।।
3. **रत्नय सरस दिचथम डालै।**
   रत्नय चँगिस आलो से।।
4. **वदअ जोलोयो माजि जालाये।**
   नाबद आपरुयि मीनाये।।

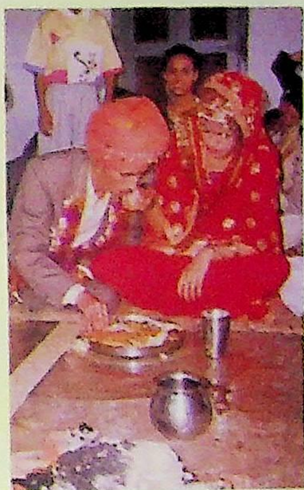
5. वीगिस खचखय मोज पारवतिये।
शेरस सअति रोजि बराबर।।

यह वनवुन (एक प्रकार का संगीत) वेद की ऋचाओं से परिपूर्ण हैं मैं विवाह के प्रत्येक संस्कार के साथ इस प्रकार का थोड़ा सा वनु वुन साथ लिख रहा हूँ ताकि पढ़ने वाले को इसका अनुमान हो तथा आनन्द मिल सके। आजकल जय माला डालने की प्रथा भी है परन्तु जिस प्रकार हम जय माला डालते हैं वह हमारी सभ्यता के विरुद्ध है जय माला भी व्यूग पर ही डालनी चाहिये। व्यूग पर जय मोला डाल कर '**द्वार पूजा**' का संस्कार किया जाता है यह पूजा लड़की के घर के द्वार (Main Gate) पर की जाती है द्वार पर आचार्यवेद मन्त्रों से जल की आहुतियां द्वार के चारों ओर छिड़कता है तथा द्वार के माथे पर तिलक लगाया जाता है इस के अतिरिक्त वर-वधू तथा उन के माता-पिता को आशीर्वाद दिया जाता है तत्पश्चात् वर-वधू तथा यजमान की 'आलथ' उतारी जाती है, फिर घर में प्रवेश किया जाता है।

(परन्तु आजकल हम अपनी परम्परा तथा सभ्यता को छोड़कर दूसरों की सभ्यता को अपनाने लगे हैं जो हमारे विनाश का कारण बन सकता है अतः हमारा



बारात खाना खाते हुए।
(बैठ कर खाना हमारी सभ्यता है।)





दयबत खाते हुए तथा
एक दूसरे को खिलाते
हुए दूल्हा और दुल्हन।





अथवास करते हुए
दूल्हा और दुल्हन।





लग्न के अन्त में पोश
पूजा करते हुये
घर के सभी सदस्य।

कर्तव्य है हम अपनी सभ्यता तथा परम्परा की रक्षा करें, जो भी आशीर्वाद इत्यादि द्वार पूजा पर होता है वह 'जंजघर' (बारात घर) वाले को मिलता है इस कारण अपनी लड़की का विवाह संस्कार धार्मिक रीति से अपने ही घर पर करें, जंजघर पर नहीं, शेष (शेष बारात का स्वागत) तथा भोजन इत्यादि का प्रबन्ध आप कहीं भी कर सकते हैं)

तत्पश्चात् लग्न की तैयारी की जाती है, यज्ञ मण्डप को सजाया जाता है इस में सब से पहले कलश स्थापन किया जाता है। वैदिक विवाह संस्कार का विशेष आरम्भ '**पाणि ग्रहण**' (अथवास) से होता है पाणि ग्रहण के समय वर-वधू एक दूसरे का हाथ पकड़ते हैं और आचार्य इनको वेद मन्त्रों का उच्चारण कराता है फिर वर-वधू का हाथ पकड़ कर ही यज्ञ-कुण्ड की प्रदक्षिणा करते हैं अग्नि की प्रदक्षिणा करते हुये अग्नि को साक्षी रख कर वेद मन्त्रों का उच्चारण करते हैं जिस में वर वधू अग्नि के सामने प्रतिज्ञा करते हैं कि हम गृहस्थ जीवन को एक आदर्श जीवन कि रूप में व्यतीत करेंगे। कन्यादान के समय कन्यादान करने वाला कहता हैं मैं स्वर्णाभूषणों से अलंकृत यह कन्या तुझ विष्णु को ब्रह्मलोक जीतने की इच्छा से देता हूँ मैं

अपने पूर्वजों की मोक्ष प्राप्ति के लिये यह कन्यादान करता हूँ विश्व के पालक तथा समस्त प्राणी तथा देव इस लक्ष्य के साक्षी है कन्यादान करते समय आचार्य वधू को यह प्रतिबंध सामने रखता है।:- "तुम धर्म अर्थ, तथा काम की प्राप्ति में इस का अतिचरण नहीं करना इस के उत्तर में वर वचन देता है 'मैं इस का अतिचरण नहीं करूंगा इस वचन को तीन बार दुहराया जाता है।'

धर्मेचार्थे च कामे च नातिचरितव्या त्वयेयम्

"नातिचरामि" इति वरः।

इस शुभ अवसर पर स्त्रियां इस प्रकार का वनवुन करते हैं।

1. **त्रे-लर बब सन्ज़, त्रे-लर हेहरसन्ज़**
   शू - लोर योन्या प्रोवयो।
2. **योन्येस, ट्यकिस त कअँकनि बन्धस**
   मोजय वन्दुस चन्दन तन।
3. **कूरेय बीठखय लग्नकिस थानस।**
   करि भगवानस् नमस्कार।।
4. **खस अग्न मण्डलिस बेह पारवतिये।**

लातये वोतुयि वेवाह कार।।

5. लग्नस बीठखय मोज पारवतिये

अग्नस कुन रोज अथ दअरिथ।।

6. अग्नकि रुति फल तोहि दोन कितिये।

लतिये वोतुय वेवाह कार।।

आचार्य लग्न पर वधू को मन्त्र पढ़ाता है जिस का अर्थ है कि परमात्मदेव मुझे अपने पिता के कुल से छुड़ावे और पति के कुल से न छुड़ावे मेरा पति आयुष्मान होवे और मेरा कुटुम्ब के सगे संबंधी समृद्ध हो।

फेरों का अर्थ है यज्ञ वेदी के चारों तरफ बैठे समाज के सम्मुख आना, जिस से सब अच्छी प्रकार से देख सकें कि किन का विवाह हो रहा है जब फेरे हो जाते है तब समझा जाता है कि विवाह हो गया, फेरों का हो जाना हिन्दुओं में कानूनी तौर पर विवाह का सम्पन्न हो जाना माना जाता है।

सप्तपदीः- सप्तपदी भी विवाह संस्कार में एक विशेष संस्कार हैं–सप्तपदी का वास्तविक अर्थ है **'सात कदम'** सप्तपदी का अभिप्राय है कि वर-वधू दोनों को इस बात की जानकारी कराई जाती है कि यह

गृहस्थाश्रम आराम से बैठे रहने का नहीं है इस आश्रम के कुछ उद्देश्य हैं उन उद्देश्यों को सिद्ध करने के लिये दोनों को कदम से कदम मिला कर आगे बढना होगा तभी वह इस आश्रम के उद्देश्यों को प्राप्त कर सकते हैं जिन बातों के लिये एक साथ चलना होगा उन बातों का वर्णन इन सात मन्त्रों में है।

1. **एकनिषेद:-** दोनों को मिल कर 'अन्न' प्राप्त करना होगा।

2. **द्वे ऊर्जे:-** दोनों को मिलकर शारीरिक बल का सम्पादन करना होगा।

3. **त्रीणि रायस्पाशाय:-** दोनो को मिल कर धन का विनियोग और व्यय करना होगा।

4. **चत्वारि मयो भवाय:-** दोनों को मिल कर एक दूसरे के सुख दु:ख में शरीक होना होगा।

5. **पंच प्रजाय:-** दोनों को मिलाकर सन्तान का पालन करना होगा।

6. **षठ् ऋतुभ्य:-** दोनों को मिलकर प्राकृतिक परिस्थिति तथा सामाजिक





दुल्हन को तरंग बाँधती हुई एक महिला।

तरंग बांधी हुई एक दुल्हन
(तरंग हमारी संस्कृति
का एक अंग है।)

बारात के बैठने का स्थान।
→





व्यूग पर दुल्हा तथा
दुल्हन की आरती उतारते हुये।
←

बारात चाय पीते हुये।
→



परिस्थिति का सामना करना होगा।

7. दीर्घायुत्वाय सप्तम्:- सातवां कदम वर-वधू की दीर्घायु के लिये। तेरा मन मेरे मन के अनुकूल हो, परमात्मा तुझे मेरे अनुकूल बनाये हम दोनों मिलकर पुत्रों को प्राप्त करें और वे वृद्धावस्था तक जीने वाले हों।

WHAT IS SAPTAPADI ?

"Saptapadi" the beginning of a never-ending relationship. The holy seven steps, that the bride and groom take holding hands on heaps of rice as the groom chants the following shlokas .....

इश एकपदी भव। सा मामनुव्रता भव ।।
विशणु स्त्वाजयतु। पुत्रान् विन्दावहै बहून्।
ते सन्तु जरदश्टयः।।

As we take this first step to-gether, you become my soulmate, my homemaker, my guide.

ऊर्जे द्विपदी भव। सा मामनुव्रता भव।

With this second step, you be-come my strength.

रायस्पोशाय त्रिपदी भव। सा मामनुव्रता भव।

With this third step, you be-come my wealth and promise to enrich it.

मायोभव्याय चतुश्पदी भव। सा मामनुव्रता भव।

With this fourth step, my health is in your hands and I will blossom in your love and care.

प्रजाभयः पञ्चपदी भव। सा मामनुव्रता भव।

With this fifth step you promise that my lineage will continue.

ऋतुभ्यः। शट्पटी भव।

With this sixth step you bring to me the joy of all seasons.

सखा सप्तपदी भव। सा मामनुव्रता भव।

And as we take this seventh step together we become united as one.

What is maanziraat?

The maanziraat ceremony takes place a week prior to the wedding. It begins with krool kharun. a ceremony that involves decorating the door of the houses of the prospective bride and this groom. On this occassion a special Kashmiri meal (vari) and Tamul-Chochi were prepared for the

neighbours and relatives. In the evening, the bride-to-be follows an elaborate bathing ritual, during which his/her feet are washed by her maternal aunt. After the bath, his/her eldest aunt decorates his/her hands and feet with maanz (henna). Maanz is also distributed among the relatives and neighbours. This women invited for this occasion are served a delicious Kashmiri meal prepared by the waza. Post Dinner all participate in a lively wanvun or music session.

What is Devgon?

The devgon is a ceremony that marks the transition of the bride & the groom from Bramcharya asharam to Grihastha ashram. The ceremony is observed separately by the girl's family and the boy's family in their respective homes. Before participating in the rituals, the relatives of the bride and the groom observe a fast. The Guruji conducts the ceremony in front of a sacred fire. The ornaments and utensils that will be given to the bride by her family are also placed in front of the fire. An essential part of the rituals is the kanya shran or shran. This involves bathing the boy/girl with a mixture of water, rice, milk and curd. Flowers are also showered over

the boy/girl. They change into a new set of traditional attire following the kanya shran.

What is Lagan?

The Guruji performs the rituals in front of a sacred fire. One of the rituals, aathwas, requires the couple to cross their arms and hold hands in this position. Their hands are covered with a cloth. According to Kashmiri folklore, the first to be able to pull out the engagement ring of the other will be the one to play a dominating role in the relationship. A mananmal or golden thread, is tied to their foreheads. The left foot of the bride and groom are placed on a kajwat or grinding stone. Stepping on seven one-rupee coins makes the first phera around the sacred fire. There are a total of seven pheras. The bride and groom feed each other some rice at the end of the ceremony called Dai-Bhatta.

After Dai-Bhatta all relatives of bride showered flowers on both bride and groom thal called Posh-Pooja.

दयबतः- विवाह संस्कार में 'दय-बत' का भी महत्वपूर्ण स्थान है। 'दय-बत' वह अन्न होता है जो

बारातियों को खाने खिलाने के पश्चात् बच जाता है। ऐसे अन्न को '**हुत शेष**' कहते हैं। वही अन्न '**हुत-शेष**' दयबत के रूप में यज्ञ मण्डप में वर-वधू के लिये लाया जाता है और उसी अन्न की आहुतियाँ अग्नि में डाल कर देवताओं को खिलाई जाती है तत्पश्चात् हुत शेष को वर-वधू को खाने के लिये दिया जाता है। वर-वधू को तथा वधू वर को यह अन्न खिलाती है यह वर-वधू के प्रेम को दर्शाने का एक सुअवसर है।

पोश पूजाः- विवाह संस्कार के अन्त में एक महत्त्वपूर्ण संस्कार पोश पूजा है जो केवल काश्मीरी पण्डितों में ही प्रचलित है इस समय वर-वधू के ऊपर एक रंगदार वस्त्र रखा जाता है फिर आचार्य वेद मन्त्र पढता है तथा घर के सभी सदस्य इन दोनों पर फूल डालते रहते हैं यह सभी वैदिक मन्त्र वर-वधू के गृहस्थ जीवन की सुख समृद्धि के लिये पढ़े जाते हैं। इस के साथ स्त्री वर्ग '**पोश पूजा**' संस्कार पर पुरातन वनवुन भी करते हैं (जाती भी हैं)।

1. **मोक्त कनि ताख छिमय तापदानस**
   छेमय ईशानस पोश पूजा।

2. डेकस पेठ चन्द्रम तस तीज़वानस।
बुथिस छुरु करूर सिरियुक रूप।।
3. सतजन सत ऋेष सअति छिस पानरु।
चित्र गुप्त छुस ठेलिबरदार।।
4. धर्मराज थोवनय पेठ धर्म वानस।
छेमय ईशानस पोश पूज़ा।।

एक प्रसिद्ध साहित्यकार ने लिखा है कि जब पं० जवाहर लाल नेहरू 27 वर्ष के थे तो उन का विवाह हकसर खानदान में पैदा हुई काश्मीरी लड़की 'कमला' से हुआ उन्होंने अपना विवाह काश्मीरी रीति रिवाज से ही किया उन की पोश पूजा पर कई मन फूल बरसाये गये।

पोश पूजा के समय पर सभी लड़की वाले तथा लड़के वाले खड़े होकर हाथ में फूल लें फिर यह मन्त्र पढ़ कर हाथ में लिये हुये फूल वधू वर दोनों पर डालें।

विष्णुवा त्रिपुरान्तको भवतु वा
ब्रह्मा सुरेन्द्रोऽथवा।
भानु-वी शश-लक्ष्णोऽथ भगवान्
बुद्धोऽथ सिद्धोऽथवा।

राग-द्वेष-विषार्त्ति-मोह-रहित:
सत्त्वानु-कम्पो-द्यतो
य: सर्वै: सह संस्कृतो गुणगणै:
तस्मै नम: सर्वदा।।

प्रसन्न-मूर्ति: स्थिर-मन्त्र-विग्रह
समग्र शक्ति:-जगत्-एक-बान्धव:
उमापति: खण्ड-शशाङ्क-शेखरो
जयत्य-नाथार्ति-हरो-महेश्वर:।

अब केवल वधू पर फूल डालें।

गायत्री ब्रह्मणो यत्-वत्-लक्ष्मी-दैत्य रिपो यथा।
उमा यथा महेशस्य, तथा त्वं भव भर्तरि।।
रामस्य च यथा सीता, विनता कश्यपस्य च।
पावकस्य यथा स्वाहा, तथा त्वं भव भर्तरि।।
यथा गौरी महेशस्य यथा स्वर्ग-पते: शची।
यथा श्री: श्रीधरस्यैव-तथा त्वं भवभर्तरि।।
यथेन्द्राणी हरिहये, स्वाहा चैव विभावूसौ।
रोहिणी चयथा चन्द्रे, दमयन्ती यथा नले।।

विवाह संस्कार कब?

स्मृतियों में बाल विवाह के बहुत प्रमाण मिलते है परन्तु समय के साथ-साथ स्मृति का खण्डन या मुण्डन भी किया जा सकता है परन्तु वेदों की आज्ञा का खण्डन नहीं किया जा सकता है अथर्ववेद में लिखा है।

"ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्"

अर्थात्:- ब्रह्मचारिणी जवान कन्या ब्रह्मचारी जवान लड़के से विवाह करे।

विवाह निश्चित समय पर ही करें।

मुहूर्त का तात्पर्य है किसी कार्य के आरम्भ करने और समाप्त होने का निश्चित समय। काश्मीरी पण्डित मुहूर्तों पर अधिक विश्वास रखते हैं तथा मुहूर्त न मिलने पर महीनों प्रतीक्षा करते रहते हैं।

ज्योतिष के आधार से वार नक्षत्र, योग, तिथि इत्यादि के समयोग से भी शुभाशुभ वातावरण बनता है जिस की खोज ऋषियों ने करके रखी है यदि आप वर-वधू को फलना-फूलना देखना चाहते हैं तो **'कन्यादान'** निश्चित समय **'निश्चित मुहूर्त'** पर ही करें।

[आजकल हम देखते है कि कोई भी महानुभाव

समय पर कन्यादान नहीं करता है तथा लड़के वाला भी निश्चित समय पर कन्यादान नहीं लेता है दोनों महानुभाव बारातियों को खिलाने पिलाने और वीडियो फिल्म बनाने के नाटक में लग जाते हैं। जिस का परिणाम हम सबों के सामने है। इस कारण यदि आप बच्चों का सुखमय भविष्य देखना चाहते हैं तो निश्चित मुहूर्त पर कन्यादान करें तथा कन्यादान लें।]

लग्नचीर:- विवाह संस्कार में '**लग्न-चीर**' का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है, लग्नचीर वास्तविक तौर पर दो शब्दों से बना है, लग्न+चीर= लग्नचीर। लग्न का अर्थ है ज्योतिषी द्वारा कन्यादान का निश्चित किया हुआ समय '**चीर**' का वास्तविक अर्थ है लिखित प्रमाण पत्र' जो लड़की वाले अपने गुरु द्वारा लड़के वालों के यहां भेजते है जिस में कन्यादान का निश्चित समय ग्रहों की स्थिति एक कुण्डली के रूप में ब्रह्मणों की संख्या, वर के साथ आने वाले बारातियों की संख्या तथा पहुँचने का समय लिखित रूप में होता है इस को '**लग्नचीर**' कहते हैं। लड़के वाले इस समय की प्रतीक्षा करते हैं कि लड़की वालों का गुरु कब लग्नचीर लायेगा उस समय लड़के वाले गुरु जी की पूरे भक्ति भाव तथा श्रद्धा से आदर करते हैं और कोई माता गुरु

जी की आलथ उतारती है इस शुभ अवसर पर स्त्री वर्ग वनवुन भी करते हैं (गाते है)।

1. दक्ष प्रजातुन ब्रह्मुण आमुत।
लग्नय चीरि तय ज़ाफल हेथ।।
2. तति द्राव सुलि तय रथि वेमानस।
योत वोत लक्ष्मी थानस पेठ।।
3. ओरअ आव ब्रह्मुण चाव द्वारिकाये।
योरअ द्रायि दीविकी आलथ हेथ।।
4. होवरव्य सूजहय ब्रह्मुण नादस।
माराज़ लालम् त लूक लछेस।।

वाग्दान गण्डुन

जब किसी के घर में लड़की तथा लड़के का विवाह होता है तो सब से पहले '**विवाह**' संस्कार में '**वाग्दान**' '**गण्डुन**' आता है अर्थात् जिस दिन लड़की तथा लड़के के विवाह की बात पक्की हो जाती है उस को वाग्दान कहते हैं या वर को कन्यादान की मौखिक स्वीकृति। वर के पिता या सम्बन्धी वधू के पिता के पास जा कर उस के सामने औपचारिक रूप से अपना प्रस्ताव रखते हैं तो वधू के पिता अथवा

सम्बन्धियों की ओर से अनुमति मिलने पर विवाह निश्चित हो जाता है। यह शुभ दिन एक मनुष्य के जीवन का एक ऐतिहासिक दिन होता है इस शुभ दिन पर पुरुष को अपने जीवन साथी का चयन होता है। इस शुभ अवसर पर भी हमें अपने धर्म, संस्कृति तथा सभ्यता के कुछ बन्धन अवश्य है परन्तु विस्थापन के पश्चात् हम अपनी परम्परा को भूलने लगें हैं तथा दूसरें की देखादेखी करके उन की परम्परा को अपनाने लगे हैं आजकल प्रत्येक महानुभाव गण्डुन (वाग्दान) का संस्कार किसी होटल में करता है जो हमारी परम्परा के विरुद्ध है तथा लड़की वाले लड़के को घर पर लाते है तथा लड़के वाले भी लड़की को घर पर ले जाते है जो कि हमारी परम्परा, संस्कृति, धर्म शास्त्र तथा मर्यादा के विरुद्ध है। जहाँ पर धर्मशास्त्र तथा मर्यादा का उलंघन किया जाता है वहाँ पर सर्व नाश अवश्य होता है (गीता) यदि हम इस परम्परा को इसी प्रकार चलाते रहे तो आने वाली पीड़ी हमें माफ नहीं करेगी।

नींद से जागते ही ॐ का उच्चारण करना चाहिये।

अन्तर्जातीय विवाह और हम

(INTER CAST MARRIAGE AND WE)

भारतीय संस्कृति में अन्तर्जातीय विवाह का निषेध है हम सभी काश्मीरी पण्डित सारस्वत ब्राह्मणों के साथ ही विवाह कर सकते हैं दूसरी जाति तथा दूसरे सम्प्रदाय के साथ नहीं, दूसरी जाति में विवाह करने को **अन्तर्जातीय विवाह** (Inter Cast Marriage) कहा जाता है, अन्तर्जातीय विवाह का हिन्दू प्रथा में निषेध है। धर्म शास्त्र में भी इस बात का पूर्ण खण्डन किया गया है। धर्म शास्त्र में लिखा है कि विवाह निश्चित् करने से पहले लड़के तथा लड़की के माता पिता को किन-किन बातों की ओर ध्यान देना चाहिये उस में सब से पहले लड़की तथा लड़के का गोत्र देखना चाहिये दोनों का एक ही गोत्र नहीं होना चाहिये, माता-पिता का कर्तव्य है कि उस वंश की पूर्णतः परीक्षा करे जिस वंश के साथ नया सम्बन्ध स्थापित करने जा रहे हैं इस विषय में लिखा भी है:- **"कुलंमग्रे परीक्षेत मातृतः पितृतः श्चेति"** अर्थात् माता-पिता का कर्तव्य है

कि वह सबसे पहले माता तथा पिता के कुल वे विषय में पूछताछ करें। इस के अतिरिक्त भी लिखा है:-

कुलं च शीलं च वपुर्वयश्च विद्यां च वितं च सनाथतं च
एतान् गुणान् सप्त परीक्ष्य देया कन्या बुधैः शेष म चिन्तनीयम्

अर्थात्:-लड़की के मां-बाप का कर्तव्य है कि वे वर के कुल, शील, शरीर, आयु, विद्या, वित्त तथा साधन-सम्पन्नता इन सात गुणों की परीक्षा करके फिर कन्या का विवाह करना चाहिये परन्तु आजकल देखने में आता है कि माता-पिता केवल लड़के को देखते है कि लड़का कमाता है और अपनी लड़की का विवाह उसके साथ कर देते है चाहे वह किसी भी कुल, जाति अथवा गौत्र के साथ सम्बन्ध रखता हो वे अपनी वास्तविकता को और नहीं देखते हैं जिस कारण हमारे बच्चों का भविष्य अन्धकारमय हो रहा है हम गर्व से कहते हैं कि हम ने बनारस, बंगाल, लखनऊ महाराष्ट्र के सारस्वत बाह्माणों से सम्बन्ध जोड़ा है परन्तु जो बिल्कुल गलत तथा शास्त्र विरुद्ध है यदि हम अपने बच्चों का उज्जवल भविष्य देखना चाहते हैं तो हमें खुल कर 'अन्तर्जातीय विवाह' Inter Caste Marriage का बहिष्कार करना चाहिये और अपने बच्चों को इस प्रकार के संस्कार देने चाहिये कि वह इन चीजों से

दूर रहे। इस विषय में छोटी-2 घोष्ठियाँ तथा छोटी-2 सभाओं का आयोजन होना चाहिये ताकि इस विषय को लेकर बच्चों में कुछ जागरूकता लाई जाये। यदि यह प्रथा ऐसे ही चलती रहेगी तो निश्चय रखिये कुछ वर्षों में ही हमारी दशा बहुत ही दयनीय हो जायेगी जो हमारे समाज के लिये खतरे की घण्टी सिद्ध होगी। आजकल हम देख रहे हैं कि अन्तर्जातीय विवाह की दौड़ ज़ोरों पर है जो हमारे भविष्य के झड़ों को काटने पर लगी हुई है इस में हमारे बच्चों का कोई दोष नहीं है अपितु दोष है हमारा क्योंकि हमने अपने बच्चों को वह संस्कार नहीं दिये हैं जिससे वह इन चीज़ों से दूर रह सके। देखने में आता है कि जिस किसी ने भी अन्तर्जातीय विवाह किया है उस का परिणाम आमतौर पर चिन्ताजनक ही निकला है। हमारा कर्तव्य है कि हम बच्चों को अपनी संस्कृति, सभ्यता तथा संस्कारों के विषय में पूरी जानकारी दे ताकि वह अनुशासन के बन्धन में रह सके क्योंकि माता-पिता का प्रभाव बच्चों पर ज्यादा पड़ता है माता-पिता का कर्तव्य है कि वह बच्चों को यह बात अच्छी प्रकार समझाये कि अन्तर्जातीय विवाह करना धर्म को नष्ट करने के बराबर है, धर्म के नष्ट होने से कुल का नाश होता है।

भगवान् कृष्ण भगवद्गीता में कहते हैः-

धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नं अधर्मोऽभिभवत्युत।

अर्थात्ः- जब कुल की पवित्र मर्यादाये, पवित्र आचरण नष्ट हो जाते हैं तब सम्पूर्ण कुल में अधर्म छा जाता है जब हम दूसरी जाति, वर्ण इत्यादि में विवाह करते है तो दूषित स्त्रियों से वर्ण संकर का जन्म होता है लिखा भी हैः-

"स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसङ्करः"

अर्थात्ः- स्त्रियों के दूषित होने पर वर्ण संकर पैदा हो जाते हैं अर्थात् परस्पर विरुद्ध कुलों, धर्मो, जातियों का मिश्रण होकर जो बनता है उस को संकर कहते हैं जब धर्म के विरुद्ध कार्य होता है तब धर्म संकर, जाति संकर, कुल संकर इत्यादि दोषों का प्रादुर्भाव होता है।

गीता में लिखा हैः-

संकरों नरकायैव कुलन्धानां कुलस्य च

अर्थात्ः-वर्ण मिश्रण, जाति मिश्रण से पैदा हुये वर्ण संकर सन्तान में धार्मिक बुद्धि नहीं होती है वह मर्यादाओं का पालन नहीं करता क्योंकि वह स्वयम् बिना मर्यादा से पैदा हुआ है वह कुल मर्यादा के विरुद्ध

आचरण करता है।

"पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदक क्रिया"

अर्थात्:-परस्पर विरुद्ध वर्णों धर्मों वाले, अपने कुल का नाश करते हैं और इन कुलघातियों के पितरों को वर्ण संकर के द्वारा पिण्ड और पानी (श्राद्ध और तर्पण) न मिलने से उन पितरों का पतन हो जाता है जब पितरों को पिष्ड-पानी मिलता रहता है तब वह पुण्य के प्रभाव से ऊंचे लोकों में रहते है जब उन को पिण्ड पानी मिलना बन्द हो जाता है तब उनका वहां से पतन हो जाता है। वर्ण संकर को पूर्वजों के प्रति आदर नहीं होता है इस कारण उन में पितरों के लिये श्राद्ध तपर्ण करने की भावना ही नहीं होती है वर्ण संकर को धर्म शास्त्र के अनुसार श्राद्ध तर्पण का अधिकार ही नहीं है। इस कारण अन्तर्जातीय विवाह' का विरोध हर समय, हर जगह करना चाहिये। मैं तमाम संस्थाओं से प्रार्थना करता हूँ कि इस विषय की ओर अवश्य ध्यान दे तथा खुल कर अन्तर्जातीय विवाह का विरोध करके अपने पूर्वजों की धरोहर की रक्षा करें।

कश्मीरी पण्डितों के विवाह गीत

वनवुन

हमारी संस्कृति के मूल स्त्रोतों में 'वनवुन' को भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान है इस का प्रयोग यज्ञोपवीत तथा विवाह संस्कारों पर होता है परन्तु समय के साथ इस 'वनवुन' का भी ह्रास होता गया। लोग पाश्चात्य संगीत की ओर जाने लगे परन्तु 'वनवुन' भी हमारे पूवर्जों की एक धरोहर हमारे पास है इस की रक्षा करना प्रत्येक काश्मीरी पण्डित का कर्तव्य है कहां 'वनवुन' तथा कहां पाश्चात्य संगीत का नंगा नाच 'वनवुन' में वेद के मन्त्रों को काश्मीरी भाषा में पिरोया गया है वेद हमारी संस्कृति के मूलाधार है इस की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है।

जब हमारे घर में 'विवाह संस्कार' का कार्यक्रम आरम्भ होता है तो एक क्रम से निम्नलिखित कार्य अथवा धर्मिक कर्म सम्पन्न होते है (1) दपुन, (2) ज्युन चट्ुन, (3) लिवुन, (4) क्रूल खारुन, (5) मस मुचरावुन, (6) मंअज लागनि, (7) माँजूरात, (8)

देवगौन, (9) दिवत गूल्य, (10) तरंग गण्डुन, (11) लग्न, (12) पोश पूजा, (13) कोरि हंन्दि वॉरिव नैरुन इत्यादि।

लड़की के विवाह संस्कार में इन कार्यक्रमों पर अलग 'वनवुन' किया जाता है। इसी प्रकार लड़के के विवाह पर।

(1) महाराज नेरनस, (2) 'पलव लागनस, (3) 'लग्नचीरि' (4) वीगिस नचनस, (5) नुश आनन विज़ि भी अलग प्रकार से वनवुन किया जाता है। यज्ञोपवीत संस्कार पर भी अलग प्रकार का वनवुन किया जाता है।

जैसेः- (1) मस का`सनस, (2) योन्य छननस,(3) वरिदानस, (4) मन्दरगछनस इत्यादि।

इस प्रकार का संगीत पिछले हजारों वर्षों से चलता आ रहा है परन्तु आजकल विस्थापन के कारण यह संगीत वृद्ध माताओं तक ही सीमित रहा तथा कही कहीं या पुस्तकों में भी लिपिबद्ध किया गया है हमारा कर्तव्य है कि हम अपने पूर्वजों की इस धरोहर को खत्म होने से बचायें तथा फिर से इस का प्रचार तथा संचालन करें।

अन्तिम संस्कार

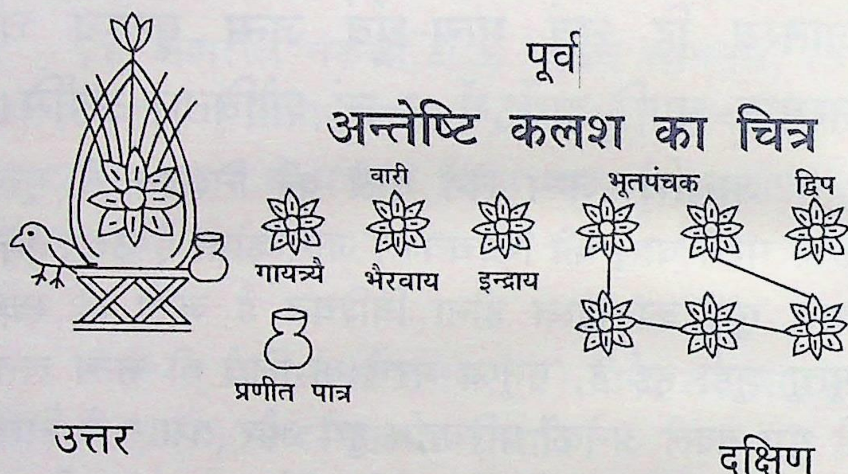
यह संस्कारों की कतार में 24वां तथा मनुष्य जीवन का अन्तिम संस्कार है। गीता में लिखा है:-

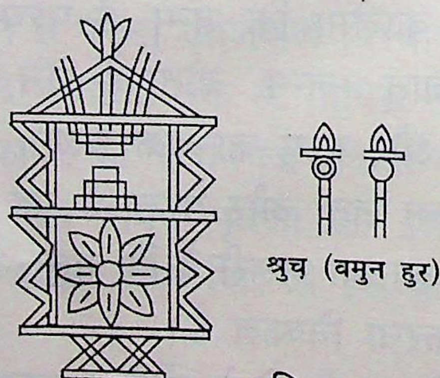
जातस्य हि ध्रुवं मृत्यु-र्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
तस्मात्-अपरि-हार्येऽर्थे न त्वं शोचितम्-अर्हसि।।

अर्थात्:-जन्म लेने वाले की निश्चय से मृत्यु और मरने वाले की निश्चय से जन्म होता है उदय होने वाले सूर्य का अस्त होना निश्चित है जन्म के साथ मृत्यु जुड़ी हुई है, मनुष्य मरने के लिये ही जन्म लेता है युग बदले अनेकों परिवर्तन हुये और संसार में नित्य परिवर्तन होते रहे हैं और होते रहेंगे परन्तु यह नियम न बदला न बदलेगा कि जन्म के पश्चात् मृत्यु और मृत्यु के पश्चात् जन्म होता है दिन और रात की भान्ति जन्म और मृत्यु का चक्र चल़ता है। कौन कैसे और क्यों जन्म लेता और मरता है यह एक रहस्य है परन्तु इतना जानना ज़रूरी है कि मृत्यु अटल है उसके लिये शोक करना निष्फल है।

एक हिन्दू के लिये जैसे जातकर्म, नामकर्ण,

चूडाकर्म आदि संस्कार वेद विधि अनुसार किये जाते हैं ऐसे ही अन्तिम संस्कार भी यज्ञ के रूप में किया जाता है इस यज्ञ में पूर्णाहुति के रूप में पंच भौतिक शरीर को पर्ण किया जाता है यह अन्तिम संस्कार रूपी यज्ञ किस का कहां और कब होगा किसी को मालूम नहीं है।





पश्चिम

अन्तिम संस्कार की सामग्री

—सफेद लट्ठा लगभग 10 मीटर, सुई धागा, छटांग भर रुई, पुलहोर (न मिलने पर) ऊन अथवा सूत का मोज़ा, शहद 1 तोला, केसर रती भर, घी आधा किलो (असली) धूप, अखरोट 15, यज्ञोपवीत 1, चोंग छोटे 10 न मिलने पर (डोने) दूध दही पाव-पाव भर, जव का आटा आधा किलो, जव दाना आधा किलो, वारी बड़ी 1 अद्द, टाकू पर्वे 5 अद्द, कतरू अथवा बड़ा टाकू, टोकरी बड़ी 1 अद्द, ब्रिय मेव शीरीन् आदि लगभग 1 किलो, सिन्दूर 1 तोला, नारीवन 5 बन्दी, दर्भ के विष्टर 2 अद्द, पवित्र 2 अदद, लकड़ी लगभग 10 मन 4 (सौ किलो।)

कनटोपे पर उल्टा गायत्री मन्त्र लिखें-

ॐ त्-या दचो प्रनः योयोधिहिमधी स्यवदे र्गोभ ण्यं रेर्वतुवि त्सर्त स्वः वर्भु भू ॐ।

अन्त्यदान विधि

मनुष्य के मरणसमुख होने पर अन्त्यदान करना आवश्यक है, अन्त्यदान के लिये यथाशक्ति चालव

वस्त्र धन आदि एकत्रित करके अन्त्यदान करने वाले मरणो–न्मुख मनुष्य के दायें हाथ में तिल पानी देकर पढ़ें–

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टि-वर्धनम् उर्वारुकम्-इव बन्धानात्-मृत्योर्मुखीय मामृतात् ॐ इत्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्-माम्-अनुस्मरन् यः प्रयाति त्यजन् देहं, स याति परमां गतिम्।। तत् सत् ब्रह्म अद्यतावत् तिथौ अद्य-महीना

पक्ष वार का नाम लेकर पढ़ें–

आत्मनो वाङ्मनः कायोपार्जित पाप निवारणार्थं विष्णु प्रीत्यर्थं-अन्नं फलं दक्षिणां वस्त्रादि ददानि ददानि ददानि पढ़कर सभी एकत्र किये वस्त्रों पर छींटे देकर–किसी दरिद्र नारायण को श्रद्धा से दीजिये।

अन्तिम संस्कार के विषय में कुछ जानकारी

गुरुजी न मिलने पर आप यह संस्कार खुद भी कर सकते है। जब भी आप समझेंगे कि मनुष्य के प्राण कण्ट पर आये हैं तो मनुष्य को चारपाई अथवा बिस्तरे

से उठाकर पृथ्वी पर उतारें, पृथ्वी लेपन कर के दर्भ अथवा घास बिछाकर थोड़ा सा तिल फैंके तथा मृतक को दक्षिण की ओर सिर रख कर उस पर रखें। सिर के नज़दीक ही जलता हुआ दीपक (चोंग) उत्तर की ओर मुंह करके रखें। जब तक क्रिया कर्म का कार्य आरम्भ नहीं होगा तब तक गीता पाठ अवश्य करते रहें या गीता का कैस्ट चलाये। किच्न को साफ करके एक पाव जव के आटे के चुचवरू (रोटी) पाव भर आलू चूर्मा तथा एक किलो चावल का बत्ता बनाये। अपने बेड़े (आंगन) में किसी जगह लेपन करें तथा अन्दर मृतक के सरहाने जलाया हुआ द्वीप लीपन की हुई जगह पर रखें, धूप जला कर रखें तथा चित्र में बनाये हुये ब्रह्म कलश, भूत पंचक के चित्र जव के आटे से बनाये ब्रह्म कलश क अषृदल पर एक द्वीप में पानी, अखरोट तथा दो दर्भ के तिनके रखें, कलश के नैऋति कोण के पास एक टाकू में दभ के दो तिनके, जल, डाल कर रखें। इस पात्र को प्रणीत पात्र कहते हैं गायत्री अष्टदल तथा अस्त्र अश्टदल पर एक एक दीप रखें दीप में पानी तथा अखरोट रखे भैरव पर वारी रखे। भूतपंचकों पर पांचदीप, पानी, दर्भ के दो दो तिनके डाल कर रखें, जव आटे के तीन पिंड बना कर

किसी टाकू में रखे, किसी मिट्टी के बर्तन में थोड़ी सी लकडियां जला कर रखें। अब ब्रह्म कलश के सामने बैठ कर जलते हुये दीप-धूप को नमस्कार करते हुये पढ़ें।

ॐ कारो यस्य मूलं, क्रम-पद-जठरं, छन्द विस्तीर्ण-शाखा, ऋक्-पत्रं, साम-पुष्पं, यजुर्-उचित फलं, स्यात्- अथर्वा-प्रतिष्ठा यज्ञ-छाया, सुश्वेतैर्- द्विजगण-मधुपैर्- गीयते- यस्य नित्यं, शक्तिः सन्ध्या, त्रिकालं दुरित-भय-हरः, पातु नो वेद वृक्षः।

भद्रं पश्येम, प्रचरेम, भद्रं, भद्रं वदेम, श्रृणु याम भद्रं, तन्नो मित्रो वरुणो मा महन्ताम्-आदितिः सिन्धुः पृथिवी उत-द्यौः। ॐ तत्-विष्णोः परमं पदं, सदा पश्यन्ति सूर्यः दिवीव-चक्षुर-आततम्, तत्-विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते विष्णो-र्यत्-परमं पदम।

गायत्री मन्त्र तीन बार पढ़ेः- **ॐ भूर्भुवः स्वः तत् सवितुर्-वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।**

भूतपंचकों के कलश को केवल अर्घ चढ़ाते हुये पढ़ें, **द्रष्ट्रे नमः, उपद्रष्ट्रे नमः-अनु-द्रष्टे नमः ख्यात्रेनमः, उपख्यात्रे नमः। जाताय नमः, जनिष्य-मानाय नमः, भूताय नमः, भविष्यते नमः, चक्षुषे नमः, श्रोत्राय नमः, मनसे नमः, वाचे नमः, ब्रह्मणे नमः, भ्रान्ताय नमः, तपसे नमः।**

प्रणीतपात्र (जो ब्रह्मकलश के दायें तरफ रखा है) में केसर का तिलक और (आगे लिखे तीन मन्त्रों से तीन फूल डालते हुए पढ़ेः-**(1) संव्वः सृजामि हृदयं संसृष्टं मनो अस्तु वः (2) संय्या वः, प्रियास्तन्वः, संप्रिया, हृदयानि वः (3) आत्मा वो अस्तु संप्रियः, संप्रियास्तन्वो मम।**

कलश के पूर्व के तरफ अर्घ सहित तिलक फैंकते हुये पढ़ेंः– **ये देवाः पुरः सदोग्नि नेत्रा, रक्षोहणस्ते-नः पान्तु, तेनोऽवन्तु तेभ्यः स्वाहा।**

उत्तर की ओर अर्घतिलक फैंकते हुये पढ़ें–

ये देवा उत्तरात् सदो मित्रा-वरुण-नेत्रा,

रक्षोहणस्ते नः पान्तु, ते नो वन्तु, तेभ्यः स्वाहा।

ऊपर की ओर अर्घ फैंकते हुये पढ़ेंः—

ये देवा उपरिषदः सोमनेत्रा अव-स्वदन्तो रक्षोहणस्ते नः पान्तु ते नो वन्तु तेभ्यः स्वाहा।

अपने आप को तिलक लगायें।

कलश को दो दर्भकाण्ड डालते हुये पढ़ेंः—

ध्रुवा-द्यौर्-ध्रुवा-पृथिवी, ध्रुवासः पर्वता इमे। ध्रुवं विश्वम्-इदं जगत् ध्रुवो राजा-विशम्-असि।

कलश को तिलक लगाते हुये पढ़ेंः-

अग्निम्-ईडे, पुरोहितं यज्ञस्य देवम् ऋत्विजम्। होतारं रत्न-धातमम्। यजमान अपने हृदय को जल से छिड़कते हुये पढ़ें—**तीर्थे स्नेयं तीर्थम्-एव, समानानां भवति मानः शंस्योर्-अरुरुषो धूर्तिः प्राणङ्-मर्त्यस्य रक्षाणो ब्रह्मणस्पते।**

अनामिका ऊँगली पर पवित्र धारण करते हुये

पढ़ेः- **वसोः पवित्रम्-असि शतधारं वसूनां पवित्रम्-असि, सहस्त्र-धारम् अयक्ष्मा वः प्रजया संसृजामि रायस्पोषेण बहुला भवन्तीः।**

अपने आप को तिलक लगाते हुये पढ़ें—**परमात्मने पुरुषोत्तमाय पञ्चभूतात्मकाय विश्वात्मने मन्त्रनाथाय आत्मने नारायणाय आधारशक्त्यै समालभनं गन्धो नमः अर्घो नमः पुष्पं नमः।**

दीपक को तिलक अर्घ पुष्प चढ़ाते हुये पढ़ें—
स्वप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरा-पहः। प्रसीद मम गोविन्द दीपोयं परिकल्पितः।

धूप को तिलक आदि चढ़ाते हुये पढ़ें—**वनस्पति रसो दिव्यो गन्धाढ्यो गन्धवत्तमः। आधारः सर्वदेवानां धूपोयं परिकल्पितः।**

सूर्य भगवान् को तिलक आदि लगाते हुये पढ़ें—**नमो धर्म निधानाय नमः स्वकृत-साक्षिणे, नमः प्रत्यक्षदेवाय भस्कराय नमो नमः, समालभनं, गन्धो नमः अर्घोनमः पुष्पं नमः**

अब यज्ञोपवीत बाँया रखकर सारी क्रिया करें—किसी पात्र में अर्घ सहित जल दायें हाथ के ऊपर से

डालते हुये पढ़ें—**यत्रास्ति माता न पिता, न बन्धु, भ्रातापि नो-यत्र सुहृत्-जनश्च। न ज्ञायते यत्रदिनं न रात्रिस्तत्रा-त्म दीपं शरणं प्रपद्ये, आत्मने नारायणाय आधारशक्त्यै दीप धूप संकल्पात् सिद्धिर्-अस्तु, दीपो नमः धूपो नमः तत्-सत्-ब्रह्म-अद्य-तावत्, तिथौ-अद्य।**

(मृतक का नाम लेकर पितः-अमुक-**गोत्रोत्पन्नः अन्त्यक्रिया निमित्तं एष ते दीप, एष ते धूपः।**

टाकू में तिलक जल आदि डालते हुये पढ़ें—**पाद्यार्थम्-उदकं नमः, शन्नो देवीर्- अभीष्टये आपो भवन्तु पीतये शंयोर्- अभिस्रवन्तु नः, भगवन्तः पाद्यम्-पाद्यम्।**

टाकू में रखे हुये विष्टर या दर्भ के दो तिनकों से कलश को छिड़कते हुये पढ़ें:-**महागणपत्यादिभ्यः कलशमण्डल-देवताभ्यः अस्त्राय गायत्र्यै भैरवाय; महादंष्ट्राय, करालाय, मदोत्कटाय, श्मशानाधिपतये भैरवाय वटुकादिभ्यः पाद्यं नमः।**

पाद्य शेष निर्माल्य में छोड़ कर फिर से टाकू में नया जल अर्ध्य के लिये डालते हुये पढ़ें—**शन्नो देवीर्-अभीष्टये-आपो भवन्तु पीतये शंयोर्-अभिस्रवन्तुनः, भगवन्तः अर्ध्यम्- अर्ध्यम्। कलशमण्डल देवता, अस्त्र, गायत्रि, भैरव, महादंष्ट्र, कराल, मदोत्कट, श्मशानाधिपते, भैरव, वटुका-दयः इदं वो अर्ध्यं नमः—तिलकं नमः, अर्धों नमः, पुष्पं नमः वासो नमः। आचमनीयं नमः**

खोसू (कटोरी) से तर्पण करते हुए पढ़ें—

ॐ तत्-सत्-ब्रह्म-अद्यतावत्-तिथौ-अद्य-मास-तिथि-वार का नाम लेकर **(पितुः अथवा मातुः)** (जिसका देहान्त हुआ हो) **अन्त्य-क्रिया-निमित्तं तिलाम्भसा-स्वर्ग- प्राप्तिर्-अस्तु, परा-तृप्तिर्- अस्तु-एताः कलश देवताः श्मशान-भैरवाः प्रीयन्तां प्रीताः सन्तु।**

अन्त में सब कलशों को फूल चढ़ाते हुये पढ़े—**ॐ तत् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूर्यः दिवीव चक्षुर-आततम्-तत् विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धिते विष्णो-र्यत-परमं पदम।**

टाकू में जो लकडी जल रही है उस में तिल तथा चावल के दाने डालते हुये पढ़ें:-

पात्रं तिलाऽक्षतै-र्मिश्रं, कुसुमोदक-विष्टरैः अग्ने श्चै-शान दिक्-भागे प्रणीतम्-अभिधीयते। प्रणीतं नै-र्ऋते स्थाप्यं स विष्णु-नात्र संशयः।

अग्नि के सामने, आप अपने दायें तरफ एक चोंग रखिये, इस चोंग में जल विष्टर तिल डाल के रखें, यह "प्रणीत पात्र" कहलाता है, इस में तीन फूल डालते हुये पढ़ें- **सं वः सृजामि हृदयं संसृष्टं मनो अस्तु वः, संसृष्टास्तन्वा सन्तु वः, संसृष्टः प्राणो अस्तु वः, संय्या वः, प्रियास्तन्वः, संप्रिया हृदयानि वः, आत्मा वो अअस्तु संप्रियः, संप्रियास्तन्वो मम।।**

प्रणीतपात्र में से नव बार जल से अग्नि को छिड़कते हुये पढ़ें-**ऋतन्त्वा सत्येन-अग्निं परिसमूहामि (1) सत्यं त्वर्तेन परिसमूहामि (2) ऋत-सत्याभ्याँत्वा परिसमूहामि (3) ऋतं त्वा सत्येन पर्युक्षामि (4) सत्यं त्वर्तेन पर्युक्षामि। (5) ऋत सत्याभ्यांत्वा पर्युक्षामि (6) ऋतंत्वा**

सत्येन परिषिञ्चामि (7) सत्यं त्वर्तेन परिषिञ्चामि (8) ऋत सत्याभ्यां त्वा परिषिञ्चामि (9) ज्वाला लिंग के ऊपर रखे हुय नारकतरू के पूर्व की ओर पाँच दर्भ के तिनके, दक्षिण की ओर तीन, उत्तर की ओर तीन, पश्चित की ओर पाँच तिनके फैंक कर अपने बायें तरफ एक टाकू में एक चुचवरू उसके ऊपर थोड़ा सा जव रखें फिर स्रुच यानी दो मुख वाले लकड़ी के वुमुनहुर के ऊपर विष्टर रखें और हाथ में उठा कर पढ़ें–**मातुः** अथवा **पितुः अन्त्य क्रिया निमित्तं**, स्रुच दर्भ के विष्टर सहित उल्टा चुचवुरू पर डाल कर पढ़ें–**अग्नये वायवे सूर्याय ब्रह्मणे प्रजापतये कूष्मर्षेभ्य जुष्टं निर्वपामि।**

स्रुच (दूसरे वुमुन हुरु) से घी की आहुतियाँ अग्नि में डालते हुए चुचवरू के टुकड़े बनाकर उसी के साथ डालते हुए पढ़ें–**(1) आयुष्यः प्राणं सन्तनु स्वाहा प्राणात् व्यानं सन्तनु स्वाहा (2) व्यानात् अपानं सन्तनु स्वाहा (3) अपानात् चक्षुः सन्तनु स्वाहा (4) चक्षुषः श्रौत्रं सन्तनु स्वाहा (5) श्रोत्रात् वाचं सन्तनु स्वाहा (6) वाचः आत्मानं सन्तनु स्वाहा (7) आत्मानः**

पृथिवीं-सन्तनु स्वाहा (8) पृथिव्या अन्तरिक्षं सन्तनु स्वाहा (9) अन्रिक्षात् दिवं सन्तुनु स्वाहा (10) दिवः स्वः सन्तनु स्वाहा।

ऋतुतिथ्यादिभ्यः देवताभ्यः स्वाहा, ब्रह्मणे स्वाहा, अभिजिते स्वाहा—चुचवरु के छोटे-छोटे टुकड़े भी घी करे आहुति के साथ डालते जायें—**वामे गायत्र्यै स्वाहा, मध्ये भैरवाय स्वाहा, दक्षिणे अस्त्राय स्वाहा, भूतपंचकेभ्यः स्वाहा, ॐ भूर्लोकाय स्वाहा, ॐ भुवोलोकाय स्वाहा, ॐ स्वर्लोकाय स्वाहा, ॐ भूर्भुवः स्व-र्लोकाय स्वाहा।**

(आज्य पात्र का घी आदि सभी अग्नि में फैंके) अखरोट जो घी पात्र में होगा वह पूर्णाहति का मंत्र पढ़ते हुये स्रुच से अग्नि में डालिये पूर्णाहुतिः डालते हुये पढ़ें—**आश्रावितं अत्याश्रावितं-वषट्कृतं-अवषट- कृतम्- अननूक्तं-अत्यनूक्तं च। यज्ञे-तिरिक्तं कर्मणो यत्-च हीनम्-अग्नि-स्तानि प्रविदन् एतु कल्पयन् स्वाहा** (नोट) अग्नि का अछिद्र मत कीजिये—जब कि यही अग्नि आप ने श्मशान में भी साथ लेना है।

कलशपूजा तथा अग्नि पूजा समाप्त करके वुज़ में लेपन करवा कर मृतक को लायें, पहने हुये कपड़े उतारिये पुरुष हो या स्त्री स्नानपट लगाइये, गर्म पानी से स्नान कीजिये, गुह्यस्थान आदि को मिट्टी तथा पानी से साफ कीजिये, स्नान करके कर्ता आँगन के पूजा स्थान से अस्त्रकलश, भैरवकलश, गायत्री कलश के चोंगू और वारी का जल लाकर गर्म पानी के स्नान के पानी में मिलायें उस जल में दूध, दही, घी सर्षप, तिल डालें, शव को बिठा कर रखिये, लिखित 16 ऋचाओं से आहिस्ता-आहिस्ता बाल्टी में से कर्ता पानी डालता जाये–

(1) ॐ सहस्त्र-शीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात् स भूमिं विष्वतो वृत्वा-ऽत्यतिष्ठत्-दशांगुलम्।। (2) पुरुष एवेदं सर्वं, यत्-भूतं यत् च भव्यम्। उतामृत-त्वस्ये शानो-यत्-अन्नेनाति रोहति।। (3) एतावानस्य महिमातो, ज्यायान् च पुरुषः। पादोस्य विश्वा-त्रिपाद् -अस्या मृतं दिवि।। (4) त्रिपाद्-ऊर्ध्वं उदैत्-पूरुषः, पादो स्येहा भवत् पुनः। ततो विश्वं व्याक्रामत्-सशना-नशने- अभिः।। (5) तस्मात् विराड्-अजायत, विराजो अधि

पुरुषः। सजातो-अत्यरिच्यत, पश्चात् भूमिम्-अथो पुरः।। (6) यत्-पुरुषेण हविषा देवा यज्ञम्-अतन्वत। वसन्तो अस्यासीद्-आज्यं ग्रीष्म-इध्मः शरत्-हविः।। (7) तं यज्ञं बर्हिषि प्रोक्षन् पुरुषं जातम्-अग्रतः। तेन देवा-अयजन्त-साध्या ऋषयश्च ये।। (8) तस्मात-यज्ञात्-सर्वहुतः, संभृतं पृषत्-आज्यम्। पशून्-तान्-चक्रे, वायव्यान्-आरण्यान्-ग्राम्यान् च ये।। (9) तस्मात् यज्ञात् सर्वहुतः, ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजु-स्तस्मात्-अजायत। (10) तस्मात्-अश्वा अजायन्त, ये के चोभयादतः। गावो ह जज्ञिरे, तस्मात् तस्मात् जाता अजावयः।। (11) यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा-व्यकल्पयन्। मुखं किम्-अस्य, कौ बाहू, का ऊरू पादा उच्यते।। (12) ब्राह्मणोस्य मुखम्-आसीत्-राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यत्-वैश्यः, पदभ्यां शूद्रो अजायत।। (13) चन्द्रमः मनसो जातः,

चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखात्-इन्द्रश्चाग्निश्च, प्राणात् वायुर्- अजायत।। (14) नाभ्या-आसीत्-अन्तरिक्षं, शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत। पदभ्यां भूमि र्दिशः श्रोत्रात् तथा लोकान्-अकल्पय-न्।। (15) सप्तास्या सन्-परिधयः-त्रिसप्त समिधः कृताः। देवा-यत् यज्ञम्-तन्वाना-आबन्धन्-पुरुषं पशुम्। (16) यज्ञेन यज्ञम्-अयजन्त देवा-स्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।

मृतक को स्नान करने वाले सामूहिक रूप से उच्चारण करते रहें– "ॐ श्रीमत् नारायण नारायण नारायण" अथवा क्षन्तव्यो मेपराधः—शिव शिव शिव भो। श्री महादेव-शम्भो! मृतक, पुरुष हो या स्त्री नया स्नानपट बाँधिये, पुरुष को पावों से नया यज्ञोपवीत डालकर बायें बाजू मे रखिये, पुराना यज्ञोपवीत सिर से निकाले, नव द्वारों (नाक के दो नथने दो कान, दो आँखें, दो गुह्यस्थान और मुख को छोटे-छोटे धूप के गोलों से बन्द करके, अनामिका ऊँगली में पवित्र डाले सिन्दूर का तिलक और नारीवन बांधिये, यदि मृतक

महिला हो तो नारीवन भी बायें कान में फंसा के रखें, मृतक के मुँह में एक सिक्का डालिये, लट्ठे तथा राम-राम पट्ट आदि से मृतक के शरीर को ओढ कर सिर पर लट्ठे का कनटोपा जिस पर केसर से उल्टा गायत्री मन्त्र लिखा हो रखें यानी मृतक का सिर जिस कपड़े से ढाँपा जाये उस पर उल्टा गायत्री मन्त्र अवश्य लिखें, मृतक के पाँवों के तलों को थोड़ा सा शहद मले तथा घास का पुलहोर पाँवों में डालें पुलहोर में थोड़ी सी रुई भी रखिये (पुलहोर न मिलेने पर ऊन या सूत का मोजा डालें-क्रिया करने वाला (यानी कर्ता) बाहिर पूजा स्थल पर निकल कर, चुचवरू के शेष बचे टुकड़े नदुर चूर्मा अथवा आलू चुर्मा भूत पंचकों के चोंग में डालें, अर्थी (यानी विमान) जो नजार ने पहले ही बना कर रखा होगा अथवा पहले का बना बनाया ही प्रयोग में लाना हो उसको अच्छी प्रकार से धोकर उस पर दर्भ बिछा कर उस पर तिल छिड़कें शव को उसी अर्थी पर रखिये, ऊपर सफेद चादर अथवा शाल आदि डालना हो डालिये, अर्थी को फूल की मालाओं से सजायें अर्थी को आंगन में निकाल कर शव का सिर दक्षिण की तरफ होना चाहिये; अर्थी के ऊपर फूल मेवा आदि फैंकिये, अब अर्थी के लिये रत्नदीप धूप कर्पूर जलायें सभी खड़े होकर सामूहिक रूप से आरती करें-

जय नारायण जय पुरुषोत्तम, जय वामन कंसारे
उद्धर मां सुरेश-विनाशन्-पतितोहं संसारे
घोरं हर मम नरकरिपो! केशव-कल्मष-भारम्
मां-अनुकम्पय दीनं अनाथं,कुरुभव-सागर-पारम्।।
जय जय देव, जया सुर सूदन, जय केशव, जय विष्णो
जय लक्ष्मी मुख-कमल-मधुव्रत, जय-दश-कन्धर-जिष्णो।
घोरं हर मम नरक रिपो! केशव..........
यद्यपि सकलं अहं कलयामि हरे, नहि किमपि-सत्वम्
तदपि न मुञ्चति मामिदं-अच्युत पुत्र कलत्र ममत्वं
घोरं हर ममनरकरिपो! केशव-कल्मषभारं............
पुनर्-अपि जननं पुनर्-अपि मरणं, पुनर्-अपि गर्भनिवासम्
सोढुम्-अलं पुनर्-अस्मिन् माधव-माम्-उद्धर-निजदासम्।
घोरं हर मम नरकरिपो..............
त्वं जननी जनकः प्रभुर्-अच्युत-त्वं सुहृत् कुलमित्रम्
त्वं शरणं शरणागत वत्सल, त्वं-भव-जलधि-वहित्रम्।
घोरं हर मम नरकरिपो..............
जनक-सुतापति-चरण-परायण शंकर- मुनिवर गीतं
धारय मनसि कृष्ण पुरुषोत्तम, वारय संसृति भीतिम
घोरं हर मम नरकरिपो........
समयानुसार "जय जगदीश" भी पढ़े (शंख बजायें)

अब खड़े होकर क्रिया करने वाला पढ़े-

तत् सत् ब्रह्म-अद्य तावत्-मास-पक्ष-तिथि-वार तथा नाम गोत्र सहित लेकर-**पितुः** अथवा **मातुः स्वर्ग-प्राप्त्यर्थं धूपं रत्नदीपं कर्पूरं अर्पयामि नमः** (नोटः-यहाँ ब्रह्मकलश का अच्छिद्र न करें) जबकि कलश का चोंग आदि आपने श्मशान पर भी लेना है। कलश के पास तीन जव के आटे के पिंडों में से **एक पिंड हाथ में उठा कर पढ़ें-तत् सत् ब्रह्म-वार- तिथि**-मृतक का नाम गोत्र सहित पढ़कर अर्थी पर शव के सिर के तरफ रखते हुये पढ़ें-पिता अथवा माता.......**अन्त्य क्रिया निमित्तं एष ते बोधः पिण्डः प्रेतः तृप्यतु।**

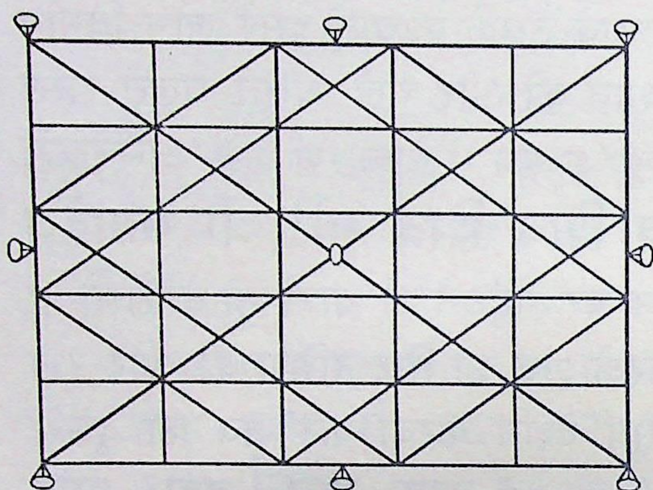
अब सारा सामग्री कलश का चोंग अखरोट सहित, अस्त्र कलश चोंग 'गायत्री कलश' अखरोट सहित 'भैरव कलश की वारी' सब सामग्री इकठठी करके किसी टोकरी में उठा कर श्मशान पर ले जाइये कलश आदि जो आंगन में डाला है अर्थी निकलने के पश्चात् सब समेट कर निर्माल्य में डालें, पृथ्वी का लेपन कीजिये-चोंग भी श्मशान पर साथ लीजिये, वुज़ में भी एक चोंग जला कर रखें उसके ऊपर कोई टोकरी आदि रखें श्मशान से वापस आने पर उस को बुजायें, क्रिया

करने वाला सबसे पहले शव के विमान को अपने दाहिने कन्धे से उठाये उसके पश्चात् दूसरे लोग विमान को उठा कर श्मशान की ओर चले, चलते-चलते रास्ते में सभी साथी सामूहिक रूप से उच्चारण करें-'**क्षन्तव्यो मेपराधः शिव शिव शिव भो! श्री महादेव शम्भो।** श्मशान पर पहुँचने से पहले आधे रास्ते में अर्थी को नीचे करके शव का सिर दक्षिण की ओर रख कर मृतक को सूर्य दर्शन करवा कर जव का दूसरा पिण्ड हाथ में लेकर पढ़ें-**तत् सत् बह्म अद्य तावत् तिथौ अद्य मासस्य पक्षस्य तिथौ वासरे पिता अथवा** जो कोई भी हो **अन्त्य क्रिया निमित्तं एष ते मकरध्वजः पिण्डः प्रेतः तृप्यतु**, फिर से अर्थी उठा कर श्मशान पर पहुँच कर अर्थी को नीचे रखकर जव का तीसरा पिण्ड रखते हुये पढ़ें-**तत् सत् ब्रह्म पितः अन्त्य क्रिया निमित्तं एष ते यम-दूतपिण्डः प्रेतः तृप्यतु।**

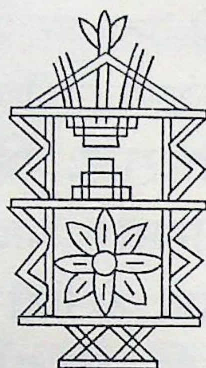
श्मशान भूमि की क्रिया

चित्र के अनुसार ब्रह्मकलश-ज्वालालिंग चितावास

चितावास चित्र



ब्रह्मकलश



का नकशा जव के आटे से बनाये, घर से ब्रह्मकलश का अखरोट सहित जो चोंग लाया है उसमें पानी विष्ठर डालकर ब्रह्मकलश के अष्टदल पर रखें-कलश पूजा घर में हम कर चुके हैं यहाँ धूप दीप जला कर चोंग को थोड़ा सा तिलक आदि लगा कर हाथ में फूल उठा कर कलश पर डालें।

प्राणायाम करके अग्नि को प्रणीत पात्र के जल से नव बार छिड़कते हुये पढें-

ऋतन्त्वा सत्येन :परिसमूह्यामि, सत्यं त्वर्तेन परषिसमूह्यामि ऋत सत्या भ्यान्तवा परिसमूह्यामि। ऋतन्त्वा सत्येन पर्युक्षामि

सत्यं त्वर्तेन पर्युक्षामि, ऋतसत्याभ्यान्त्वा पर्युक्षामि, ऋतन्त्वा सत्येन परिषञ्चामि सत्यंत्वर्तेन परिषिञ्चामि।

वुमुनहुरु से अग्नि में एक एक मन्त्र से आहुति डालें–**आयुषः प्राणं सन्तनु स्वाहा, प्राणात्-व्यानं, सन्तनु-स्वाहा, व्यानानात्-अपानं सन्तनु स्वाहा, अपानात्-चक्षुः सन्तनु स्वाहा, चक्षुषः श्रोत्रं सन्तनु स्वाहा, श्रोत्रात् वाचं सन्तनु स्वाहा, वाचं आत्मानं सन्तनु स्वाहा, आत्मानः पृथिवीं सन्तनु स्वाहा, पृथिव्या अन्तरिक्ष सन्तनु स्वाहा, अन्तरिक्षात्-दिवं सन्तनु-स्वाहा, दिवः स्वः सन्तनु, स्वाहा। त्वं सोमा सि सत्पति, त्वं राजोतवृत्रहा त्वं भद्रो असि क्रतुः स्वाहा।** ऋतु तिथ्यादि देदें (अन्यथा पढें-**ऋतु तिथ्यादिभ्यः देवताभ्यः स्वाहा-ब्रह्मणेस्वाहा अभिजिते स्वाहा**-चुचवरु के छोटे टुकड़े भी घी के आहुति के साथ डालते जायें सभी जनता जो मृतक के साथ आई हो यजमान (क्रिया करने वाले) के पास आकर पंक्तिबद्ध रूप में बैठें जनता अलग-अलग टोलियों में बातें न करें बल्कि यदि आप

मृतक के अन्तरात्मा की शान्ति के इच्छुक हैं तो निम्न वेदमन्त्रों से आहुति डालते समय श्रद्धा से सामूहिक रूप में **"स्वाहा"** का उच्चारण करें–यह आहति स्त्रुव (एक मुख वाले) वमुन हुर से (कर्ता) यजमान ही डालें–

(1) ॐ आयुर्यज्ञेन कल्पतां स्वाहा

(2) ॐ प्राणो यज्ञेन कल्पतां स्वाहा

(3) ॐ अपानो यज्ञेन कल्पतां स्वाहा

(4) ॐ ब्यानो यज्ञेन कल्पतां स्वाहा

(5) ॐ उदानो यज्ञेन कल्पतां स्वाहा।

पात्र का घी आदि सभी अग्नि में डालें-अब मृतक के शरीर को पूर्णाहुति के लिये चित्तावासकलश पर तिलक, फूल, अर्घ, लकड़ी की छोटी-छोटी 9 खूँटियाँ जव का आटा, बत्ता का पात्र, लेपन के पास लाकर रखें, अब पहले चितावास की पूजा करनी है, चित्तावास के चित्र में लिखी रेखायें जव के आटे से बनायें-इस को माया जाल भी कहते हैं, इन रेखाओं के अनुसार खूँटियाँ अपने स्थान पर दबायें (यह माया जाल धागे से भी बनाया जाता है)

टाकू में जल तथा विष्टर (दर्भ के दो तिनके) डालकर तीन फूल डालते हुये पढ़े-

संवः सृजामि हृदयं संसृष्टं मनो अस्तु वः (1) संसृष्टा, तन्वः सन्तु वः, संसृष्टः प्राणो अस्तु वः (2) संयावः प्रिया स्तन्वः, संप्रिया हृदयानि वः, आत्मा वो अस्तु संप्रियः संप्रियास्तन्वो मम (3) दर्भ के दो तिनके हाथ में पकड़कर तीन बार गायत्री मन्त्र पढ़ें-ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितु-र्वरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचादयात्। फिर से पढ़ें-तत्-सत्-ब्रह्म अद्य-तावत्-तिथौ- अद्य-मासस्य पक्षस्य तिथौ-वारान्वितायां- ईशाने गगनयुतस्य ईशानस्य आग्नेये-सुकेतु- युतस्य-रुद्रस्य, नैऋते सजलयुतस्य विष्णोः, वायवे वायु-युतस्य, आत्मनो पितुः अन्त्यक्रिया निमित्तं अर्चां अहं करष्ये ॐ कुरुष्व। दर्भ के दो दो तिनके ईशानी कोण से डालते हुये पढें :- चित्तावास देवतानां इदं-आसनं नमः, पाद्यं नमः, अर्घ्यं नमः, गन्धो नमः। अर्धो नमः पुष्पं नमः, वासो नमः। अपोशानं नमः, आचमनीयं नमः।

इसी चितावास कलश के ऊपर लकड़ी की चिता तैयार करके मृतक को, उस पर रखें, सिर दक्षिण की ओर

मुँह पूर्व की ओर रखें। लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़ों के सिरों पर रुई लगा कर घी में डुबो कर रखें, उनको उल्मुक कहते हैं, क्रिया करने वाले को चाहिये एक उल्मुक को टाकू या कतरु में से जलाकर जलते हुये उल्मुक से मृतक के सिर के तरफ से जलाना आरम्भ करें फिर आरम्भ करें फिर दूसरे साथी उल्मकों से चिता को हर तरफ से जलायें, अब घी का पात्र उमनहुर घी में डाला हुआ अखरोट आदि डालते हुये पढ़ें। **आकूत्यै त्वास्वाहा ईशाने, कामायै त्वा स्वाहा इति वायवे, समृद्धयै त्वा स्वाहा इति नैऋते**-चिता के तीन प्रदक्षिणा करके सभी उल्मक चिता के पूर्व दक्षिण कोण में फैंके, सभी कर्ता तथा अन्यान्य साथी हाथ में यव तथा कुछ फूल उठा कर खड़े रहें और यह पूर्णाहुति का मन्त्र पढ़ें-**आश्रावितं अत्याश्रावितं वषट्कृतम्- अवषट् कृतम्- अननूक्तं अत्यनूक्तं च, यज्ञेतिरिक्तं कर्मणो यत्-च-हीनम्- अग्निस्तानि प्रविदन्-एतु कल्पयन् स्वाहा**-फिर से यव आदि की आहुति उठाकर-कर्ता पढ़े-**अस्मत् त्वम्- अभिजातासि, त्वत्-अहं जायते पुनः**- मृतक का नाम लेकर-**आसौ पिता अथवा माता स्वर्गाय लोकाय स्वाहा** (आहुति डालिये) अब अन्त में मृतक के सिर के नीचे

जलता हुआ दीपक तथ आग का टोकू रखिये, जब चिता अच्छी प्रकार से प्रज्ज्वलित हो जये, मृतक का शरीर जब लगभग जल चुका हो-तो कुल्हाड़ी मृतक के सिर के तरफ जमीन में कुछ दबा कर रखें-फिर कर्ता को चाहिये-अस्त्र कलश की वारी को उठा कर उस में नया जल डालिये, चिता के तीन प्रदक्षिणा करते हुये वारी का जल आहिस्ता-आहिस्ता फैंकते हुये अखरी तीसरे प्रदक्षिणा के अन्त में कुल्हाड़ी या पत्थर पर वारी तोड़ दीजिए-उपस्थान करते हुये पढें-

नमो महिम्ने उत चक्षुषे महतां पिता उरु तत् गृणीमः हुतो याहि पथिभि-देवयानैर्-औषधीषु प्रतिष्ठा शरीरैः

कर्ता दर्भ के दो तिनके हाथ में लेकर पढ़े-

पितुः अथवा मातुः अन्त्य क्रिया निमित्तं चितावास देवतानां पूजनम्-अछिद्रम्-अछिद्रम्-अस्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः सभी श्मशान पर आई हुई जनता चित्ता की ओर हाथ जोड़ के रहें-सभी सामुहिक रूप में पढ़े- **ॐ यो रुद्रो अग्नौ य अप्सु य औषधीषुयो वनस्पतिषु यो रुद्रो विश्वा भुवना विवेश तस्मै रुद्राय नमो अस्तुदेवाः।।**

सभी परिजनों का जहाँ पानी सुलभ हो नहा कर मुख शोद्धन आदि करके बायाँ यज्ञोपवीत रख कर थोड़ा सा तिल हाथ में लेकर तर्पण करना चाहिये तर्पण करते हुये पढे - **ॐ तत् सत् ब्रह्म मास-पक्ष-तिथि-वार का नाम लेकर-पितुः अथवा मातुः अन्त्य क्रिया निमित्तं एतत् तिलोदकम्-एतत् ते उदक-तर्पणम्।**

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः





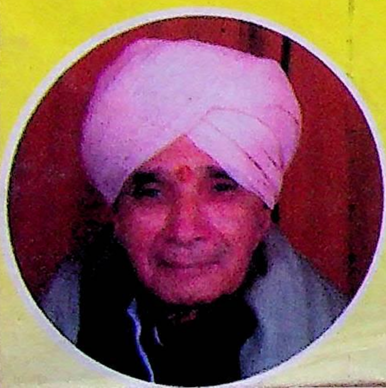









ॐ



नमः शम्भवाय च
मयो भवाय च
नमः शंकराय च
मयस्कराय च
नमः शिवाय च
शिवतराय च